साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

खेती संदेश

मूल्य : 6/- रुपए

All Subject to Patiala Jurisdiction.

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Chief Editor : Parminder Kaur • Issue Dt. 07-06-2025 • Vol.1 No.3 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

कम वैश्विक कीमतें, स्थानीय उत्पादन में कमी से इस सत्र में कपास निर्यात प्रभावित होगा : सी.ए.आई.

कॉटन एसोसिएशन ऑफ इंडिया (सी.ए.आई.) ने कहा कि सस्ते ब्राज़ीलियाई कपास और कम घरेलू उत्पादन से चालू 2024-25 सत्र के दौरान पिछले साल की तुलना में निर्यात घट कर 15 लाख गांठ रहने की संभावना है।

सी.ए.आई. ने कहा कि उसने वर्ष 2024-25 सत्र (अक्तूबर-सितम्बर) के लिए 15 लाख गांठ कपास निर्यात होने का अनुमान लगाया है, जो पिछले सत्र के 28.36 लाख गांठ से 13.36 लाख गांठ कम है।

सी.ए.आई. के अध्यक्ष अतुल एस. गनात्रा ने बताया, "अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में ब्राज़ील का कपास सस्ता होने के कारण हमारे निर्यात में कमी आई है। ब्राज़ील का कपास भारत की उपज कीमत से 7 प्रतिशत सस्ता है। इसके अलावा हमारा उत्पादन भी पिछले सत्र से 11 प्रतिशत कम है, जिसके परिणामस्वरूप आयात में वृद्धि हुई है।"

वर्ष 2024-25 के लिए कपास का आयात 33 लाख गांठ होने की उम्मीद है, जो पिछले वर्ष की तुलना में 17.80 लाख गांठ अधिक है। वर्ष 2024-25 सीज़न के लिए कुल कपास उत्पादन 291.35 लाख गांठ होने का अनुमान है, जबकि पिछले सत्र में 327.45 लाख गांठ का उत्पादन हुआ था।

इसके अलावा सी.ए.आई. ने अप्रैल 2025 के अंत तक 185 लाख गांठ कपास की खपत का अनुमान लगाया है, जबकि 30 अप्रैल, 2025 तक निर्यात खेप 10 लाख गांठ का अनुमान है, जिसमें कपड़ा मिलों के पास 35 लाख गांठ और कॉटन कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया (सी.सी.आई.), महाराष्ट्र फैडरेशन और अन्य (एम.एन.सी., व्यापारी, जिनर, निर्यातक, अन्य) के पास शेष 95.89 लाख गांठ है।

सी.ए.आई. ने कपास सत्र 2024-25 के अंत तक अपनी कुल कपास आपूर्ति 354.54 लाख गांठ होने का अनुमान लगाया है।

पांच साल से चल रही थी रिसर्च, जल्द बाज़ार में आएगी वैक्सीन

एन.आर.सी.ई. के वैज्ञानिकों ने घोड़ों में होने वाली हार्पीस बीमारी के लिए देश की प्रभावशाली वैक्सीन बनाई

घोड़ों में होने वाली हार्पीस बीमारी को लेकर राष्ट्रीय अश्व अनुसंधान केन्द्र, हिसार (एन.आर.सी.ई.) के वैज्ञानिकों ने देश की सबसे प्रभावशाली वैक्सीन तैयार की है। पांच साल के रिसर्च के बाद वैज्ञानिकों को यह कामयाबी मिली है। जल्द ही यह वैक्सीन बाज़ार में उपलब्ध होगी।

घोड़ों में होने वाला हार्पीस रोग संक्रामक वायरस के कारण होता है। दुनियाभर में घोड़ों में यह इंफेक्शन पाया जाता है। एन.आर.सी.ई. के वैज्ञानिकों के अनुसार घोड़ों में गर्भपात का सबसे बड़ा कारण यही संक्रमण है। ब्रेन पर संक्रमण होने से यह जानलेवा भी हो जाता है। इसे लेकर पहले से वैक्सीन बने हुए हैं, लेकिन इस वैक्सीन की तरह प्रभावी नहीं हैं। पहले जो वैक्सीन बना वह वायरस को मारकर तैयार किया गया है, दुनिया व देश में इसका उपयोग भी हो रहा है। लेकिन कुछ समय बाद बीमारी वापस आ जाती है। एन.आर.सी.ई. ने वायरस के रोग बनाने वाले जीन को खत्म करके वैक्सीन बनाया है। ऐसा पहली बार है, जब चार

जीन हटाकर वैक्सीन तैयार किया गया है। दो जीन बीमारी पैदा करने वाले और दो रोग प्रतिरोधक क्षमता कम करने वाले जीन को हटा कर अश्व अनुसंधान केन्द्र के निदेशक डॉ. टी.के. भट्टाचार्य के मार्गदर्शन में डॉ. नितिन बिरमानी, डॉ. बी.सी. बेरा, डॉ. तरुणा आनंद की मुख्य भूमिका रही। यह वैक्सीन सभी घोड़ों में लगेगा।

अश्व स्वास्थ्य इकाई के हैड डॉ. नितिन बिरमानी ने बताया कि अनुसंधान के दौरान 15 प्रतिशत घोड़ों में एंटीबॉडी पाई गई। घोड़ा फार्म में बीमारी के कारण एक साथ कई घोड़ियों को गर्भपात हो जाता है। एक कम्पनी ने इस वैक्सीन को खरीद लिया है। जल्द ही यह बाज़ार में आ जाएगी।

लंग्स, ब्रेन व बच्चेदानी पर अटैक करता है वायरस

हार्पीस का वायरस घोड़ों के लंग्स, ब्रेन व बच्चेदानी पर अटैक करता है। लंग्स में संक्रमण के कारण घोड़ों में श्वांस संबंधी रोग, बुखार, खांसी होता है। ब्रेन में संक्रमण होने पर घोड़ा बेचैन रहता है। सोता नहीं है। छटपटाता रहता है। ब्रेन पर वायरस का अटैक कई बार जानलेवा बन जाता है। वहीं बच्चेदानी पर वायरस का इंफेक्शन होने से गर्भपात हो जाता है या गर्भ में पल रहा बच्चा कमज़ोर पैदा होता है।

वर्षा जल संरक्षण अभियान

फिर देश की जीवन रेखा बन जाएगा जल संचयन

वर्षा जल संचयन एक पारंपरिक लेकिन अत्यंत प्रभावी तकनीक है, जो वर्षा के जल को इकट्ठा कर विभिन्न उपयोगों हेतु संग्रहीत करती है। भारत में बढ़ते जल संकट और शहरीकरण के चलते इसकी महत्ता और आवश्यकता लगातार बढ़ रही है। यह एक पर्यावरण-संवेदनशील, कम लागत और टिकाऊ समाधान प्रदान करता है।

भारत में वर्षा जल संचयन बाजार का मूल्य वर्ष 2024 में लगभग 263 मिलियन अमेरिकी डॉलर आंका गया था। इसके 2030 तक 378 मिलियन अमेरिकी ड0लर तक पहुंचने की उम्मीद है। वर्षा जल संचयन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें वर्षा के जल को इकट्ठा करके, संगृहीत कर विभिन्न उपयोगों हेतु प्रयोग किया जाता है। जिससे यह जल व्यर्थ बहने के बजाय एक उपयोगी संसाधन बन जाता है। एक टिकाऊ तकनीक छतों, जमीन की सतहों अथवा अन्य संग्रहण क्षेत्रों से वर्षा जल को पाइपों या नालियों के माध्यम से टंकियों, हौदों अथवा जलाशयों में पहुंचाकर संचयित करती है। यह एक प्राचीन परंपरा है, जिसे आज जल संकट और पर्यावरणीय चुनौतियों को देखते हुए पुन: अपनाया जा रहा है।

संगृहीत वर्षा जल का उपयोग सिंचाई, घरेलू जरूरतों, औद्योगिक प्रक्रियाओं और भूजल पुनर्भरण के लिए किया जा सकता है। यह न केवल नगरपालिका जल आपूर्ति पर निर्भरता को घटाता है, बल्कि मिट्टी के कटाव को रोकने और शहरी बाढ़ को कम करने में भी सहायक होता है। इसके अतिरिक्त, यह आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देता है और अनिश्चित वर्षा वाले क्षेत्रों में एक स्थायी जल स्रोत उपलब्ध कराता है।

यह पर्यावरण-मित्र विधि

विशेष रूप से शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में अत्यंत लाभदायक है, जहां जल संसाधनों की भारी कमी है। यह एक कम लागत और सरल पद्धति है, जिसे व्यक्तिगत आवासों से लेकर सामुदायिक परियोजनाओं तक विभिन्न स्तरों पर अपनाया जा सकता है। यदि इसे शहरी और ग्रामीण योजना में समाहित किया जाए तो जल संकट का समाधान संभव है और टिकाऊ जल प्रबंधन सुनिश्चित किया जा सकता है।

केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा जल प्रबंधन को लेकर सख्त नीतियां लागू की गई है। जैसे कि 'अमृत मिशन' में वर्षा जल संचयन को शहरी जल संकट के समाधान का अभिन्न अंग बनाया गया है। तमिलनाडु जैसे राज्यों ने सभी भवनों में वर्षा जल संचयन को अनिवार्य कर दिया है, जो अब देश के अन्य हिस्सों में भी लागू किया जा रहा है। तमिलनाडु ने यह पहल 2001 में शुरू की गई थी। इसके अलावा, स्थानीय निकाय करों में छूट और वित्तीय सहायता भी प्रदान करते हैं जिससे इन प्रणालियों की स्थापना को प्रोत्साहन मिलता है। 2023 में केंद्रीय भूजल बोर्ड के अध्ययन के अनुसार, तमिलनाडु में निगरानी किए गए 72 फीसदी कुओं में भूजल स्तर में वृद्धि दर्ज की गई है। जलवायु परिवर्तन के प्रभाव जैसे अनियमित वर्षा और सूखे की घटनाओं ने वर्षा जल संचयन की आवश्यकता को बढ़ा दिया है। गैर-सरकारी संगठनों, स्कूलों और मीडिया द्वारा चलाए जा रही जागरूकता अभियानों ने लोगों को इस दिशा में प्रेरित किया है।

भारत का शहरीकरण तीव्र गति से हो रहा है। 2021 में लगभग 500 मिलियन की शहरी आबादी 2031 तक 600 मिलियन तक पहुंचने की संभावना है। शहरी क्षेत्र जहां कंक्रीट का वर्चस्व होता है, वहां वर्षा जल का प्रोतिक भूजल पुनर्भरण बहुत कम हो पाता है। ऐसी स्थिति में वर्षा जल संचयन एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

दरअसल, इस अभियान की एक प्रमुख चुनौती जनसामान्य में तकनीकी जानकारी और जागरूकता की कमी है, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में। अनेक लोग इसे जटिल और महंगा मानते है, जिससे इसका व्यापक स्तर पर क्रियान्वयन प्रभावित होता है। तकनीकी विशेषज्ञता की कमी, गलत डिजाइन और रखरखाव में लापरवाही के कारण कई प्रणालियां विफल हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त, वित्तीय बाधाएं भी हैं। गरीब वर्ग और छोटे किसान इस प्रणाली की लागत वहन नहीं कर पाते, जबकि सरकारी सब्सिडी कई बार पर्याप्त नहीं होती या उन तक पहुंच नहीं पाती।

अब वर्षा जल संचयन में स्मार्ट तकनीक का प्रयोग होने लगा है। सेंसर-आधारित प्रणालियां, इंटरनेट ऑफ थिंग्स और डेटा विश्लेषण की मदद से जल स्तर की निगरानी, गुणवत्ता परीक्षण और स्वचालित नियंत्रण संभव हो गया है। उदाहरण के लिए, टंकियों में लगे सेंसर पानी की मात्रा और स्वच्छता के स्तर की जानकारी देते है। शहरी क्षेत्रों में अब विकेंद्रीकृत वर्षा जल संचयन प्रणालियां लोकप्रिय हो रही है, जो एक-एक भवन या समाज स्तर पर काम करती हैं। यह प्रणाली नगरपालिका पर निर्भरता को घटाकर स्थानीय स्तर पर जल संकट का समाधान करती है। ग्रीन बिल्डिंग प्रमाणीकरण और सरकारी प्रोत्साहनों ने इसे और बल दिया है।

उल्लेखनीय है कि हरियाणा सरकार के अनुसार, 'मेरा पानी – मेरी विरासत' जैसी पहल से 2023-24 में लगभग 24.87 खरब लीटर पानी की बचत की गई। सितंबर, 2024 में प्रधानमंत्री ने गुजरात के सूरत में 'जल संचय जन भागीदारी' अभियान की शुरुआत की, जो 'जल शक्ति अभियान रू कैच द रेन' के तहत समुदाय-आधारित जल संरक्षण को बढ़ावा देती है। फरवरी, 2023 में स्ट्रॉमसेवर ने दो नई घरेलू वर्षा जल संचयन प्रणालियां पेश कीं, जो विशेष रूप से गर्मियों में जल संकट और आवासीय मांग को ध्यान में रखकर डिजाइन की गई हैं।

यदि सही नीति, जागरूकता और तकनीकी सहायता जल संचयन को मिलती रहे तो यह देश के जल संकट का एक स्थायी समाधान बन सकता है। विशेषकर हरियाणा जैसे राज्यों में जहां भूजल स्तर खतरनाक रूप से नीचे जा रहा है, वहां इस प्रणाली को अनिवार्य रूप से अपनाना आवश्यक हो गया है। सरकार, समाज और उद्योगों के सम्मिलित प्रयासों से ही बात बनेगी।

दीपक कुमार शर्मा

मधुमक्खी परिवारों में गण छूट एवं घर का छोड़ना तथा नियंत्रण

मैनवंशों में गण छूट तथा घर का छोड़ना एक बहुत बड़ी समस्या है जिनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है :

गण छूट : बसन्त ऋतु के आगमन पर मधुमक्खियों के लिए मौसम अनुकूल हो जाता है। चारों तरफ फूलों की भरमार होती है। मधुमक्खियां अधिक से अधिक पुष्परस एवं पराग एकत्रित करती हैं। रानी मधुमक्खी तीव्रता से अण्डे देने लगती है तथा देखते ही देखते मौनवंश शक्तिशाली हो जाते है। इसी मौसम में अधिक गर्मी वाले दिन एकाएक शक्तिशाली वंश की लगभग आधी मधुमकिखयां अपनी रानी के साथ मौनग्रह को छोड़कर झुण्ड के रूप में उड़ने लगती है। पास में ही ठण्डक वाले स्थान पर किसी पेड़ की टहनी पर अस्थायी रूप से बैठ जाती है। मधुमक्खियों की इस प्रक्रिया को गणछूट या झुण्ड छोड़ना कहते है। इसके बाद इसमें से कुछ मधुमक्खियां आसपास मधुरस एवं पराग से भरपूर स्थान की तलाश करती हैं। जैसे ही ऐसी जगह मिलती है, सभी मधुमक्खियां उड़कर वहां पर स्थायी रूप से अपने वंश की स्थापना कर लेती है। गणछूट के कारण प्राकृतिक तौर पर वंशों की वृद्धि होती है। इससे मधुमक्खी वंशों में पराग की आवश्यकता बढ़ जाती है जिससे परागण क्रिया ज्यादा होने से अच्छी किस्म के फूलों एवं बीजों का उत्पादन होता है। इसके विपरीत गण छूट के कारण मौनवंश कमजोर पड़ जाते है तथा मधुमक्खी पालक को शहद बहुत कम प्राप्त होता है।

गण छूट के कारण : रानी मधुमक्खी के जबड़ों की ग्रन्थियों से एक वाष्पीकरण होने वाला पदार्थ उत्पन्न होता है जिसे सबस्टॉस कहते है। इस पदार्थ के वाष्प कण मौनग्रह में सभी मधुमक्खियों को आवश्यकतानुसार मिलते रहते है तथा मौनवंश की सभी गतिविधियां सुचारू रूप से चलती रहती हैं। शक्तिशाली मौनवंश की रानी में इस पदार्थ की कमी हो जाने पर गण छोड़ने की प्रवृति जागृत हो जाती है। श्रमिक मक्खियां नई रानी बनने की प्रक्रिया आरम्भ कर देती है। कई बार मौनगृह में स्थान की कमी होने पर भी गण छूट होने की सम्भावना रहती है। इसके अलावा गण छूट मौनपालन के वार्षिक चक्र, मौसम तथा मौनगृह में मक्खियों की संख्या पर भी निर्भर करता है। गण छूट से पहले रानी मक्खी एवं अन्य

मक्खियों के बीच तालमेल कम हो जाता है। नर मक्खियों के कोष्ठ दीखने लगते है। रानी मक्खी को श्रमिक मक्खियां छत्ते में अधिक घूमने के लिए विवश कर देती है तथा नई रानी के लिए कोष्ठों का निर्माण होने लगता है।

गण छूट का नियन्त्रण : गण छूट रोकने के लिए मौनगृह में नर मक्खियों के कोष्ठों को नष्ट कर देना चाहिए। अगर नई रानी के लिए नीचे की तरफ कोष्ठ दिखें तो उन्हें भी नष्ट कर देना चाहिए। अगर आवश्यक हो तो रानी मक्खी के पंख काट देने चाहिए इससे वह उड़ान भरने में असमर्थ हो जाती है। बसन्त ऋतु में विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए तथा मौनगृह में आवश्यकतानुसार खाली छत्ते वाले फ्रेमों को देना चाहिए जिससे रानी मक्खी अण्डे दे सके तथा श्रमिक मक्खियां पुष्परस एवं पराग संचय कर सके। कई बार यह सारा प्रबन्ध करने के बावजूद भी मौन वंश में गणछूट की प्रवति बनी रहती है। ऐसी स्थिति में मौनवंश का विभाजन कर देना ही इस समस्या का समाधान है। अगर गण छूट के कारण आसपास पेड़ की टहीनयों आदि पर मधुमक्खियां दिखें तो उन्हें पकड़कर मौनगृहों में स्थापित कर देना चाहिए।

घर का छोड़ना : कई बार भोजन की कमी या शत्रुओं एवं बीमारियों के अधिक प्रकोप से मधुमक्खियां मौनगृह छोड़कर भाग जाती है जिसे घर छूट या घर का छोड़ना कहते हैं। इससे मधुमक्खी पालक को बहुत नुकसान होता है। घर छोड़ने से पहले मधुमक्खियां वंश में बच्चे पालना बन्द कर देती हैं और सारा भोजन खा लेती हैं इससे इसको रोकने के लिए आवश्यक है कि मौन वंश में भोजन की कमी न होने पाये तथा मौनगृह शिशु रहित नहीं होना चाहिए। अगर आवश्यक हो तो दूसरे मौनगृह से कोष्ठों में बन्द बच्चों वाले छत्तों को देना चाहिए। इसके अलावा मौनवंशों को शत्रुओं एवं विभिन्न रोगों से बचाना चाहिए। समय-समय पर मौनगृहों की सफाई करनी चाहिए तथा अगर कोई बीमारी आदि हो तो उसका उपयुक्त इलाज करना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते है कि अगर उपरोक्त विधि द्वारा मौनालय की उचित प्रबन्ध व्यवस्था की जाए तो मौनवंशो में गण छूट एंव घर छोड़ने की प्रवति को रोका जा सकता है इससे मौनवंश शक्तिशाली रहेंगे तथा मधुमक्खी पालकों को अधिक आय प्राप्त होगी।

कम पानी, कम श्रम

धान की सीधी बुवाई के फायदों और चुनौतियों पर एक नजर

दानवीर सिंह व प्रवीण कुमार, पीएच.डी., सस्य विज्ञान विभाग;
राहुल, पीएच.डी., मृदा विभाग, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार
नरेश कुमार, प्रशिक्षण सहायक, कृषि विज्ञान केंद्र, कैथल।

"आगामी जल संकट के साथ-साथ पारंपरिक चावल की खेती की उच्च जल आवश्यकताओं और बढ़ती श्रम लागत ने जल उपयोग, प्रणाली की स्थिरता और लाभप्रदता में सुधार के लिए नई प्रबंधन रणनीतियों की खोज की है। धान की सीधी बुवाई विधि लोकप्रिय हो रही है क्योंकि इसमें कम निवेश की आवश्यकता होती है, जिससे यह बेहतर पानी और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए एक अच्छा विकल्प बन जाता है। अच्छी पोषक तत्वों के प्रबंधन और एकीकृत खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ अल्पकालिक, जल्दी पकने वाली चावल की किस्मों के उपयोग ने कई किसानों को प्रत्यारोपित चावल से धान की सीधी बुवाई पर जाने

के लिए प्रोत्साहित किया है। संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में, यह विधि अत्यधिक मशीनीकृत हो गई है। इस बदलाव से फसलों के लिए पानी की जरूरतों को कम करने और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने, जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और शमन में मदद करने और पोषक तत्व प्रबंधन में सुधार करने की उम्मीद है। यह लेख धान की सीधी बुवाई के लिए एकीकृत तकनीकी तरीकों की समीक्षा करेगा, इस दृष्टिकोण के संभावित लाभों और चुनौतियों का मूल्यांकन करेगा और चावल की खेती में भविष्य के रुझानों का सुझाव देगा।"

कृषि स्तर पर चावल के लिए जलवायु-लचीला उत्पादन प्रणालियों को बढ़ावा देना कृषक परिवारों को उनकी घरेलू खाद्य सुरक्षा बनाए रखने के लिए के लिए आवश्यक है। भारत की चावल आधारित फसल प्रणालियों में, लगभग 40 प्रतिशत क्षेत्र और 50 प्रतिशत उत्पादन भारत-गंगा के मैदानों से उत्पन्न होता है। चावल दुनिया भर में एक मुख्य भोजन के रूप में कार्य करता है, जिसकी खेती 162 मिलियन हैक्टेयर में की जाती है, जो वैश्विक कृषि योग्य भूमि का लगभग 11 प्रतिशत है, जो सालाना लगभग 758 मिलियन मीट्रिक टन उपज देता है। पूर्वी भारत में, चावल आधारित उत्पादन प्रणाली 18 मिलियन हैक्टेयर कृषि योग्य भूमि पर हावी है, जो राष्ट्रीय चावल उत्पादन क्षेत्र का लगभग 42 प्रतिशत है। हालांकि, पारंपरिक प्रत्यारोपित चावल के उत्पादन के तरीके ऊर्जा-गहन और महंगे हैं, जिससे लाभ कम होता है। इसलिए, उत्पादकता और लाभप्रदता दोनों को बढ़ाते हुए जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के लिए चावल उत्पादन के अनुरूप वैकल्पिक फसल स्थापना विधियों का पता लगाना महत्वपूर्ण है। धान की सीधी बुवाई प्रणाली पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने और उत्पादन को बढ़ावा देने का एक आशाजनक अवसर प्रदान करती है। उत्पादन प्रथाओं में सुधार करके, हम निरंतर उत्पादकता और पर्यावरणीय गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान में, मौजूदा फसल किस्मों के कारण उत्पादकता का स्तर स्थिर हो गया है। प्रत्यारोपित चावल की विधि न केवल ऊर्जा-गहन है, बल्कि मिट्टी के स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक है, जो बाद की सर्दियों की फसलों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है। धान की सीधी बुवाई जलवायु-लचीला प्रथाओं को कुशलता से बढ़ावा देने के लिए एक प्रभावी समाधान के रूप में काम कर सकता है।

धान की सीधी बुवाई विधि के कई लाभ हैं जो इसे पारंपरिक प्रत्यारोपित चावल की विधि के मुकाबले एक आकर्षक विकल्प बनाते हैं। यहां पर इसके प्रमुख लाभ दिए गए हैं :-

1. खेत की तेजी से तैयारी : यह तैयारी प्रक्रिया को सरल बनाता है, क्योंकि प्रत्यारोपण विधियों की तरह खेतों को समतल करने की आवश्यकता नहीं होती है। इससे रोपण और फसल चक्रों के बीच तेजी से बदलाव हो सकता है।

2. जल की बचत : धान की सीधी बुवाई में पानी की कम जरूरत होती है। पारंपरिक तरीकों की तुलना में, जहां खेतों को पानी से भरना पड़ता है, धान की सीधी बुवाई में कम पानी की आवश्यकता होती है, जिससे जल संसाधनों की बचत होती है।

3. कम मजदूरी लागत : पारंपरिक पद्धतियों में खेत की जुताई और पखराई की आवश्यकता होती है, जबकि धान की सीधी बुवाई में इन प्रक्रियाओं की आवश्यकता नहीं होती, जिससे मजदूरी की लागत कम होती है।

4. मृदा का संरक्षित रहना : धान की सीधी बुवाई विधि से मृदा की संरचना में सुधार होता है क्योंकि इसमें जुताई की प्रक्रिया कम होती है, जिससे मृदा की गुणवत्ता बेहतर रहती है और भूमि का क्षरण कम होता है।

5. जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीलापन : धान की सीधी बुवाई विधि जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अधिक लचीली हो सकती है, क्योंकि यह अधिक सूखा-सहिष्णु हो सकती है और जलवायु परिवर्तन के विभिन्न पहलुओं को संभाल सकती है।

6. बेहतर समय की उपयोगिता : धान की सीधी बुवाई विधि से समय की बचत होती है, क्योंकि इसमें बीज बोने और पौधों को लगाने की प्रक्रिया कम समय लेती है। इससे किसान अधिक समय में अधिक फसल उगा सकते हैं। फसल विशेषज्ञों के अनुसार, धान की सीधी बुवाई विधि से खेत की तैयारी और बीज बोने की प्रक्रिया में 20-25 प्रतिशत कम समय लगता है

7. धान की सीधी बुवाई संसाधन संरक्षण के उद्देश्य से एक ऐसी तकनीक का प्रतिनिधित्व करता है, जिसकी विशेषता श्रम लागत को कम करते हुए और मशीनीकरण को सुविधाजनक बनाते हुए पानी का अधिक कुशलता से उपयोग करने की क्षमता है।

धान की सीधी बुवाई विधि के कई फायदे हैं, जैसे कि कम पानी की आवश्यकता और श्रम की बचत, लेकिन इसके कुछ नुकसान भी हैं जो भारत के संदर्भ में महत्वपूर्ण हो सकते हैं। यहाँ पर कुछ प्रमुख नुकसान दिए गए हैं, जिनके साथ डेटा, तथ्यों और आंकड़ों के साथ विवरण प्रदान किया गया है।

1. खरपतवार प्रबंधन की समस्याएं :

* धान की सीधी बुवाई विधि से खेती करने पर खरपतवार की समस्या बढ़ जाती है।

* भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (IARI) के अनुसार, धान की सीधी बुवाई विधि में खरपतवार प्रबंधन की चुनौती 20-30 प्रतिशत तक बढ़ जाती है।

2. जल प्रबंधन की चुनौतियां : जबकि धान की सीधी बुवाई में पानी की खपत कम होती है, परंतु जल प्रबंधन के लिए सटीकता की आवश्यकता होती है। जल की कमी या अत्यधिक जलवृष्टि से बीज अंकुरण में समस्याएं आ सकती हैं।

3. प्रारंभिक पौधों की मृतता : धान की सीधी बुवाई से खराब मौसम के कारण बीज अंकुरण में मुश्किलें आ सकती हैं, जैसे सूखा या अत्यधिक बारिश।

2020 में भारत सरकार के कृषि मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार, धान की सीधी बुवाई में बीज अंकुरण की दर 10-20 प्रतिशत कम हो सकती है यदि मौसम अनुकूल न हो।

4. धान की सीधी बुवाई में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी चिंता का विषय है - ऐसे पोषक तत्वों का असंतुलन (Zn, Fe, Mn, S vkSj N) अनुचित और असंतुलित छ उर्वरक अनुप्रयोग का परिणाम है।

इन नुकसान और चुनौतियों के बावजूद, धान की सीधी बुवाई विधि का सफल कार्यान्वयन इसके लाभों को सामने ला सकता है यदि सही तकनीक और प्रबंधन के साथ इसे अपनाया जाए।

निष्कर्ष : वैश्विक जल संकट और बढ़ती श्रम लागत के बीच, धान की सीधी बुवाई धान उत्पादन का एक आकर्षक विकल्प पेश करता है। धान की सीधी बुवाई के लिए विशेष धान जातियों की संकरण और उचित प्रबंधन रणनीतियों की आवश्यकता है। सही प्रबंधन के साथ, धान की सीधी बुवाई से पारंपरिक प्रत्यारोपित चावल की तुलना में समान उपज प्राप्त की जा सकती है। हालांकि, धान की सीधी बुवाई के साथ खरपतवार प्रबंधन और पोषक तत्वों की उपलब्धता में बदलाव जैसे मुद्दे उत्पन्न होते हैं। उचित मिट्टी चयन और प्रभावी बीज प्राइमिंग तकनीकें भी महत्वपूर्ण हैं। धान की सीधी बुवाई में मिथेन उत्सर्जन में कमी आती है, लेकिन NO_2 उत्सर्जन बढ़ता है, जिससे सुरक्षा के लिए और उपायों की आवश्यकता है। धान की सीधी बुवाई में पौधों का गिरना (Lodging) और झोंका रोग (Blast) के खतरे से निपटने के लिए जैव प्रौद्योगिकी और आनुवंशिक दृष्टिकोण मददगार हो सकते हैं।

धान की सीधी बुवाई बनाम प्रत्यारोपित चावल

पहलू	धान की सीधी बुवाई	प्रत्यारोपित चावल
बुवाई की विधि	बीज सीधे खेतों में बोये जाते हैं।	बीज को नर्सरी बेड में 20-25 दिन के लिए बोया जाता है और फिर पौधों को जलभराव वाले खेतों में प्रत्यारोपित किया जाता है।
श्रम आवश्यकता	कम श्रम की आवश्यकता होती है।	अधिक श्रम की आवश्यकता होती है।
पादप स्वास्थ्य और जड़ प्रणाली	पौधे आमतौर पर स्वस्थ होते हैं और उनकी जड़ें गहरी और मजबूत होती हैं।	पौधों की जड़ें गहरी नहीं होतीं।
बीज मात्रा	अधिक मात्रा में बीज की आवश्यकता होती है।	कम मात्रा में बीज की आवश्यकता होती है।
खरपतवार नियंत्रण	खरपतवार नियंत्रण मुश्किल होता है।	खरपतवार नियंत्रण आसान होता है।

प्रत्यारोपित चावल

धान की सीधी बुवाई

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 01 अंक : 03
तिथि : 07-06-2025

सम्पादक

परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers,** Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

पंजाब में धान की सीधी बुवाई प्रति किसानों की बेरुखी पड़ रही भारी

डी.एस.आर. लक्ष्य घटा, 5 लाख एकड़ तय

भूजल के मामले में पंजाब में 113 ब्लॉक डार्क ज़ोन में है, जहां भूजल स्तर 600 से 700 फुट पर है। सरकार इससे चिंतित है। ऐसे में वह अधिक से अधिक किसानों को भरपूर फायदे वाली धान की सीधी बुवाई (डी.एस.आर.) के लिए प्रोत्साहित कर रही है, लेकिन इनकी बेरुखी के चलते उसने डी.एस.आर. का लक्ष्य पिछले साल के नीचे (7 लाख एकड़) से घटा कर 5 लाख एकड़ निर्धारित किया है। सूबे में इन दिनों सीधी बुवाई की जा रही है। पहली जून से रोपाई शुरू होगी।

राज्य में वर्ष 2022–23 में 35836 किसानों ने डी.एस.आर. में दिलचस्पी ली थी। उनको 25.23 करोड़ रुपए आर्थिक मदद मिली थी। यह 2023–24 में घटा कर 19.91 करोड़ रुपए रह गई। तब 19223 किसानों ने डी.एस.आर. तकनीक अपनाई थी। वर्ष 2024–25 में 21338 किसानों को 29 करोड़ 2 लाख रुपए मिले थे। 2 लाख 53 हज़ार एकड़ में धान की सीधी बुवाई की गई थी, जबकि लक्ष्य 7 लाख एकड़ तय किया गया था। सरकार के भरपूर प्रयासों के बावजूद किसान डी.एस. आर. से दूरी बना रहे हैं। उन्हें 1500 रुपए प्रति एकड़ की राशि और 500 रुपए अतिरिक्त प्रोत्साहन राशि आकर्षित नहीं कर पा रही है। वे पारम्परिक पद्धति यानी पुडल ट्रांसप्लांटिंग को तरजीह दे रहे है।

डी.एस.आर. के कई फायदे, बचत भरपूर

उन्होंने बताया कि किसानों को सीधी बुवाई के बहुत फायदे है। डी. एस.आर. तकनीक से धान की खेती करने पर 15 से 20 फीसदी पानी की कम खपत होती है। प्रति एकड़ 3500 रुपए मज़दूरी संबंधी लागत में कमी आती है। मोटर कम चलने से बिजली की बचत होती है। धान के लिए खेत तैयार करने में लगने वाला डीज़ल भी बचता है।

सरकार अनुदान बढ़ाकर करे 2500 रुपए प्रति एकड़

होशियारपुर के साथ खानपुर गांव के किसान जरनैल सिंह ने एक साल डी.एस.आर. अपनाया। वह बताता है कि प्रोत्साहन राशि गेहूं के मौसम में खाते में आई। भुगतान में देरी से कोई लाभ नहीं हुआ। इसलिए उसने पारंपरिक पद्धति को ही बेहतर माना। दूसरे किसान सुरेन्द्र सिंह उर्फ मौजी ने बताया कि 1500 रुपए प्रति एकड़ बहुत कम है। सरकार को इसे बढ़ा कर कम से कम 2500 रुपए करना चाहिए, ताकि अधिक लाभ हो।

अनाज भण्डारण की वैज्ञानिक विधियां

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि, उचित विधियां न अपनाने से भण्डारण में प्रति वर्ष हजारों टन अनाज बर्बाद हो जाता है। भण्डारण की वैज्ञानिक विधियां अपना कर इस बर्बादी को काफी हद तक कम किया जा सकता है। भण्डारण के पूर्व अनाज को धूप में सुखाएं, अतिरिक्त नमी उड़ जाने पर, दांतों के बीच दानें दबाने पर कट की आवाज आएं, यह अवस्था लगभग 10 प्रतिशत नमी पर आती है। दानों को तेज धूप में सुखाने के बाद एक दो दिन छाया में रखें, फिर भण्डारण पात्रों में डालें।

भण्डारण के पूर्व कोठियों एवं अन्य भण्डारण पात्रों की अच्छी तरह साफ–सफाई आवश्यक है। कच्ची कोठियों–कुठलों की लिपाई–पोताई करके, उन्हें नमी एवं वायु अवरोधक बनाएं। पांच मि.ली. प्रति लीटर पानी में मैलाथियान का घोल बनाकर कोठियों के अन्दर बाहर अच्छी तरह छिड़काव करें। यदि बोरों में भण्डारण किया जाना है तो, मैलाथियान के घोल से बोरों को अच्छी तरह उपचारित कर लें। भण्डार गृह की दीवारों, विशेषकर फर्श एवं दीवारों के जोड़ वाले स्थानों पर छिड़काव करें। बोरों में अनाज भर कर उन्हें लकड़ी के तख्तों के ऊपर, दीवारों से एक हाथ स्थान छोड़कर छल्ली लगाएं। इससे बोरों तक नमी नहीं पहुंच पाएगी और एक हाथ चौड़ा स्थान निरीक्षण में चलने–फिरने के काम आएगा। फिर ई. सी.बी. तीन मि.ली. की एम्प्यूल प्रति क्विंटल अनाज के हिसाब से फोड़ कर बोरों के बीच रखें एवं तुरन्त पोलोथिन की शीट से बोरों को फर्श तक ढक कर, नीचे गीली मिट्टी से अच्छी तरह से बंद कर एयर टाइट (वायु अवरोधी) बना दें।

ध्यान रखें, पिसे हुए खाद्य पदार्थों, तिलहनों एवं नमीयुक्त खाद्यान्नों पर ई. डी.बी. का प्रयोग नहीं किया जाता। भण्डारित अनाज के मुख्य रूप से दो ही शत्रु हैं। पहला नमी एवं दूसरा–कीट। नमी से विभिन्न प्रकार की फफूंद पैदा होती है, जिसकी वजह से अनाज में सड़न होती है। भण्डारगृहों में कीटों के अलावा चूहों से भी अनाज काफी मात्रा में बर्बादी होता है। चूहों से क्षति रोकने के लिए विष प्रलोभक बनाकर, भण्डारगृह में जगह–जगह बीच–बीच में रखते रहें।

बाजार में चूहे मारने की दवा जिंक फॉस्फाइड सामान्यतः दस ग्राम के पाउच में उपलब्ध रहती है। लगभग एक पाव आटा या भीगे हुए गेहूं या अन्य अनाज के दानें में एक पुड़िया (पाउच–10 ग्राम) जिंक फॉस्फाइड अच्छी तरह मिलाकर थोड़ा सा कोई भी खाने वाला तेल मिला दें। भण्डारगृहों में चूहों का नुकसान दिखने पर यह विष प्रलोभक बनाकर रखे। इससे चूहों के नुकसान में कमी आएगी। चूहा बहुत होशियार एवं चालाक प्राणी होता है, थोड़ी सी आशंका हो जाने पर वह विष प्रलोभक नहीं खाएगा। अतः बीच–बीच में सामान्य दाना–चारा खाद्य तेल मिला हुआ, भण्डारण गृहों में रखते रहें। मरे हुए चूहों को एकत्रित करके खेत में या बारी में फलदार पौधों के नीचे गाड़ दें।

सुरक्षित अनाज भण्डारण अनाज उत्पादन से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है। भण्डारगृहों में हर वर्ष बर्बादी होने वाले हजारों टन अनाज को सुरक्षित भण्डारण विधियों से काफी हद तक बचाया जा सकता है।

धान में पानी की बचत कैसे करें?

पंजाब में धान की फसल, बाकी सभी फसलों के मुकाबले ज्यादा पानी लेती है। यदि इस फसल में कुछ तकनीकों का इस्तेमाल किया जाए तो काफी हद तक पानी की बचत हो सकती है। कुछ तकनीकें इस प्रकार हैं :

1. धान की पनीरी 30 से 35 दिनों तक उगाकर खेतों में लगाओ। क्योंकि पनीरी वाला क्षेत्रफल असल खेत के मुकाबले कम होता है। जिस में 20-25 दिन पनीरी और अधिक समय रखी जा सकती है और पानी की काफी बचत हो जाती है। ऐसी पनीरी को यूरिया खाद की पहली किस्त, 25-26 किलो यूरिया, चार हफ्ते बाद डाल देनी चाहिए। इस तरह पिछेती पनीरी लगाने के साथ, बरसाती पानी का भी सही इस्तेमाल हो जाता है।

2. धान की सीधी बुवाई : दरमियानी से भारी जमीनों में धान की सीधी बुवाई की जा सकती है। धान की सीधी बुवाई के लिए मशीन का इस्तेमाल किया जा सकता है। धान का प्रति एकड़ 8-10 किलो बीज, 20 सैंटीमीटर के फासले पर नमी पर बुवाई की जाती है। बुवाई से पहले यदि बीज को 8-10 घण्टे भिगो दिया जाए तो पौधों का जमाव जल्दी होता है। ऐसी फसल में खरपतवारों के खात्मे के लिए स्टोंप (पैडीमैथलीन 30 ई.सी.) एक लीटर प्रति एकड़ के हिसाब बुवाई से दो दिनों के अन्दर-अन्दर स्प्रे किया जाए और बुवाई से 30-35 दिनों बाद नोमनीगोल्ड (विसपायरी बैक 10 एस.पी.), 100 मि.ली. प्रति एकड़ के हिसाब से इस्तेमाल किया जा सकता है। बुवाई किट धान को पानी की कमी से बचाने के लिए 4-5 दिनों बाद लगातार पानी लगाते रहो। 5-6 पानी लगाओ। उस के बाद बरसात शुरू हो जाती है और पानी जरूरत अनुसार देते रहो। इस तरह बोए धान में 10-15 प्रतिशत पानी की बचत हो जाती है।

3. धान की बैडो पर रूपाई : धान की 30 दिनों की पनीरी बैडों के अन्तर्गत मेढ़ों के दरमियान लगाई जाती है। मेढ़ों में पानी ऐसे हिसाब कम से कम लगाया जाता है कि मिट्टी की तरेडे न फटे और फसल को भी कोई नुकसान न हो। इस तरह बोए धान में तकरीबन 25 प्रतिशत पानी की बचत होती है।

4. टैनशीयोमीटर : जिस खेत में टैनशीयोमीटर लगाया जाता है, उसमें टैनशीयोमीटर का लैवल देखकर ही पानी लगाया जाता है। ऐसे में खेतों में 30 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है।

5. धान की कम समय लेने वाली किस्में बीजें : धान की कम समय लेने वाली किस्में बोई जा सकती हैं। यह किस्में कम समय में पक जाती हैं और पानी भी कम लेती हैं।

6. धान कद्दू करके लगाएं : जिन खेतों में रवायती धान लगाई जाती है वहां कद्दू करके धान की पनीरी लगाई जाए। बिना कद्दू किए खेत में पनीरी लगाने के साथ पानी ज्यादा खपत होता है। इसलिए रवायती धान की खेती में कद्दू जरूर किया जाए।

7. लेजर लेवल का इस्तेमाल : धान के खेतों में लेजर लैवल का इस्तेमाल बहुत लाभदायक है। खेत का एक बराबर स्तर होने के कारण पानी भी एक बराबर लैवल में रहता है। ऐसे खेतों में पानी की काफी बचत होती है।

8. धान को पानी जरूरत अनुसार दें : बरसात के दिनों में धान को पानी तब ही दें जब जरूरत हो। इस फसल को पानी यहां तक कम कर दिया जाए कि मिट्टी की तरेड़ें न फटे, धान की फसल को कोई नुकसान नहीं होगा।

9. पानी के इस्तेमाल के सही तरीके : खालों की निरन्तर सफाई करके, चूहों के बिलों को बन्द करके, खालों को पक्का करके, जमीनदोष पानी का इस्तेमाल करके या टियूबवैल से खेत तक प्लास्टिक की पाईपें इस्तेमाल करके और यदि हो सके टियूबवैल को खेत के बीच में लगाकर, पानी का नुकसान 15 से 40 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है।

10. एक से बढ़कर तकनीकों का चुनाव : जैसे पनीरी बड़ी करके लगाना, सीधी बुवाई, कम समय की किस्मों में टैनशीयोमीटर का इस्तेमाल करना, लेजर लैवल का इस्तेमाल करना या कद्दू करना। इसी तरह मेढ़ों पर बुवाई करते समय पानी के इस्तेमाल के सही तरीके अपनाए जाएं। अपनी जरूरत और समय अनुसार अलग- अलग तकनीकों को इकट्ठा करके भी इस्तेमाल किया जा सकता है और पानी की बचत और भी ज्यादा की जा सकती है।

मशरूम पाऊडर व आचार भी बनाएं : डॉ. रूपिंदर कौर

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना के माइक्रोबायोलॉजी विभाग के सहयोग से कौशल विकास केन्द्र ने विगत् दिवस 'ग्रीष्मकालीन और उष्णकटिबंधीय मशरूम की खेत' पर तीन दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया, जिसमें प्रदेशभर के 71 किसानों, ग्रामीण महिलाओं और युवाओं ने भाग लिया। केन्द्र की एसोसिएट डायरैक्टर (कौशल विकास) डॉ. रूपिंदर कौर ने प्रशिक्षुओं को प्रेरित किया कि वे केवल इसकी खेती तक ही सीमित न रहें, बल्कि मशरूम पाऊडर, आचार आदि के उत्पादन के लिए इसके प्रसंस्करण का विकल्प चुनें। पी.ए.यू. के कुलपति डॉ. सतबीर सिंह गोसल ने कहा कि पी.ए.यू. मशरूम उत्पादन और कृषि समुदाय की आय बढ़ाने के लिए साल में दो बार यह प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है। पंजाब शीर्ष मशरूम उत्पादक राज्यों में से एक है।

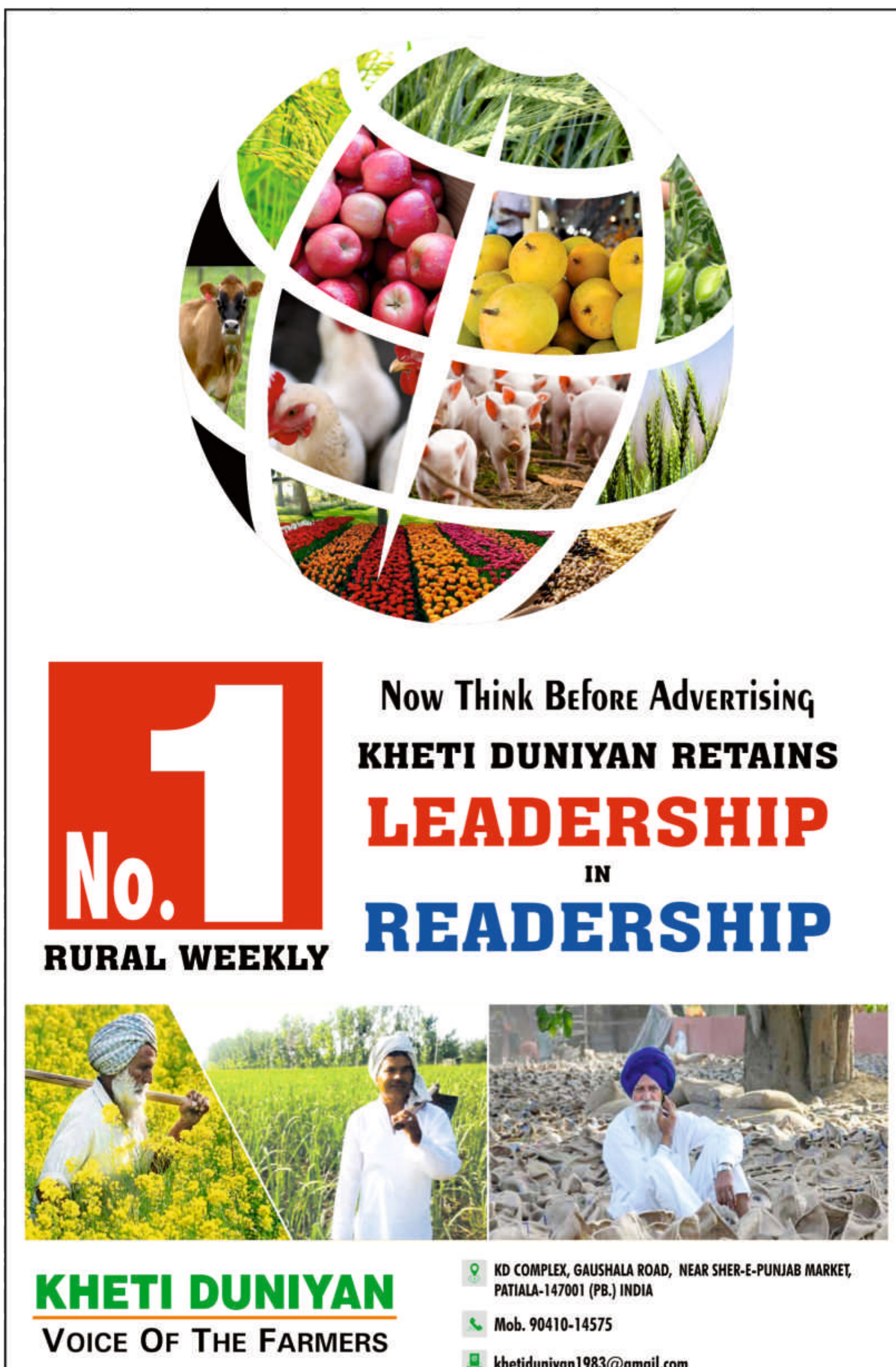

गर्मी के मौसम में

मुर्गियों की देखभाल कैसे करें

डॉ. दुर्गेश मित्तल,
विषय विशेषज्ञ पशुपालन,
9–भोज मार्ग, झाबुआ
(मध्य प्रदेश)

आज के परिदृश्य में पशुपालन एक आय का साधन बन गया है। पशुपालन में से भी मुर्गीपालन एक मुख्य व्यवसाय के रूप में सामने आया है। मुर्गीपालन व्यवसाय में लाभ अगर अधिक है तो इसमें ध्यान भी अधिक देना पड़ता है विशेषकर गर्मी के मौसम में। अप्रैल-मई माह में गर्मी शुरू हो जाती है। इसी मौसम में अत्यधिक गर्मी के कारण अण्डा तथा मुर्गी के मांस का उत्पादन बहुत कम हो जाता है। बड़ी मुर्गियां ठण्डे मौसम की अपेक्षा गर्मियों में ज्यादा प्रभावित होती है। मुर्गी के शरीर का सामान्य तापमान 41 डिग्री सेंटिग्रेड होता है जब यह तापक्रम बढ़ जाता है, तो मुर्गियों की श्वसन गति बढ़ जाती है, जिसके कारण शरीर का पानी वाष्प बन कर उड़ जाता है। श्वसन गति बढ़ जाने से रक्त में कार्बनडाई आक्साइड गैस की मात्रा भी घट जाती है। जून माह में अत्यधिक गर्मी पड़ती है, मुर्गियों को इससे काफी तकलीफ होती है। क्योंकि अंडा देने के लिए सबसे उत्तम तापमान 21 डिग्री सेंटिग्रेड होता है। इस तापमान पर वे सबसे ज्यादा अण्डे देती हैं। मुर्गीपालन व्यवसाय को अधिक लाभकारी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उनकी सही समय पर देखभाल करें। मौसम के अनुसार देखभाल के तरीकों में भी बदलाव आवश्यक है क्योंकि ज्यों-ज्यों तापमान बढ़ना शुरू होता है अण्डा उत्पादन की क्षमता कम होने लगती है। एयर सैक नमी के कारण शरीर के तापमान को कम करने में मदद तो करता है पर वे चरम गर्मी के तापमान को बर्दाशत नहीं कर सकते। जब तापमान 37.8 डिग्री सेंटिग्रेड या उससे उच्च पहुंच जाता है मुर्गियां हीट स्ट्रोक से मरने लगती है। अत: गर्मियों में मुर्गियों की विशेष प्रकार से देखभाल की जानी चाहिए।

मुर्गियों में लू लगने के कारण : लू लगने पर मुर्गियां चोंच खोलकर रखती हैं ताकि वाष्पीकरण द्वारा शरीर के तापमान को कुछ कम किया जा सके। इसके मुर्गियों को हाफना, पंखों को अपने शरीर से अलग फैलाकर रखना, सुस्त पड़ जाना आदि लक्षण देखने को मिलते है।

अत्यधिक तापमान का मुर्गियों पर प्रभाव :

1. तापमान बढ़ने के साथ-साथ मुर्गियों के आहार में कमी हो जाती है। गर्मी के दिनों में 10-15 प्रतिशत दाना कम खाती है। यदि तापमान 26-32 डिग्री सेंटिग्रेड से ज्यादा हो जाता है तो दाना खाने की दर 20-30 प्रतिशत कम हो जाती है और इस प्रकार कम खाने से उत्पादन प्रभावित होता है।

2. मुर्गियां जिस अनुपात में दाना खाती है उस अनुपात में वजन नहीं बढ़ता है।

3. अण्डा उत्पादन क्षमता घट जाती है।

4. अण्डे का आकार छोटा हो जाता है, कटे छिलके तथा पतला छिलका लू लगने के लक्षण है।

5. मुर्गियों की रोग प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है, मुर्गियों में रानीखेत रोग जाड़े की अपेक्षा गर्मी में ज्यादा पाया जाता है। मुर्गियां दान कम खाती है किंतु पानी ज्यादा पीती हैं।

6. प्रजनन क्षमता घट जाती है।

7. यदि तापमान 38 डिग्री सेंटिग्रेड से अधिक व सापेक्षिक आद्रता 50 प्रतिशत से ज्यादा हो जाती है तो ब्रायलर मुर्गियां मरने लगती है।

8. अत्यधिक गर्मी के चलते मुर्गियों को पतले दस्त, खाना हजम न होना आदि की शिकायत होती है। अत्यधिक गर्मी (हीट स्ट्रोक) से मुर्गियां मरने लगती है।

मुर्गियों को गर्मी से बचाने के लिए उनके आवास, खानपान आदि का ध्यान रखना अति आवश्यक है। इसके लिए निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए :

1. मुर्गियों को सही जगह मिलनी चाहिए। मुर्गियों के शैड या पैन में जरूरत से अधिक मुर्गियां रखना नुकसान देह होता है। इससे गर्मी व ढेगी और हीट स्ट्रोक का अंदेशा बढ़ेगा। इसलिये गर्मियों में मुर्गियों की संख्या 16-20 प्रतिशत कम कर देना चाहिए।

2. मुर्गीघर की दीवारों व ऊपर की छत को सफेद चूने से पुतवाना चाहिये। जिससे मुर्गीघर का तापमान लगभग 3 डिग्री सेंटीग्रेड कम हो जाता है। मुर्गीघर में पर्दे लगाना चाहिए। परदों को पूरा बंद नहीं करना चाहिए, परदों को इतना बंद करें कि मुर्गी आवास में मुर्गियों को सीधे लू न लगे। परदा बंद करने का उद्देश्य सिर्फ इतना होना चाहिए कि पक्षियों को लू से बचाया जा सके एवं ठंडी हवा का प्रवाह बना रहे।

3. मुर्गीघर में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि मुर्गीघर में जो गर्म हवा हो व जिसमें नमी हो गयी हो वह बाहर निकलती रहे तथा शुद्ध हवा पर्याप्त मात्रा में मिलती रहे। यदि आप मुर्गी आवास के अंदर हो और आप अंदर के वातावरण में आराम महसूस कर रहे हो तो यह वातावरण मुर्गियों के लिए अनुकूल है।

4. मुर्गीघर के दोनों तरफ से करीब तीन फीट छज्जा बाहर निकले रहना चाहिये। गर्मी में सुबह 10 बजे के बाद मुर्गीघर की खिड़कियों में भींगा हुआ बोरा टांग देना चाहिए या बोरे के पर्दों को पानी से गीला करते रहना चाहिए। शाम 3 बजे के बाद बोरा खोल देना चाहिए।

5. यदि हवा बहुत गर्म और सूखी हो तो नमी व ठंडक पहुंचाने के लिये छत पर फुव्वारे से छिड़काव करना चाहिए।

6. मुर्गियों के शैड के चारों तरफ हरियाली रखना चाहिए। शैड के चारों ओर छायादार वृक्ष जैसे शहतूत आदि व हरा चारा बोने से भी तापमान को कम करने में मदद मिलती है।

7. मुर्गी आवास के अंदर पंखे या एग्जास्ट पंखे अवश्य लगाना चाहिए।

8. अधिक गर्मी या सूखे मौसम में लिटर कई बार बहुत ही धूल भरा हो जाता है। ऐसी स्थिति में लिटर पर थोड़ा पानी छिड़क दें परन्तु इसे गीला न करें। लिटर का तापमान आसपास के तापमान से हमेशा कम रहता है और मुर्गियां इसके अंदर लौटती रहती हैं और अपने आपको ठंडा रखती हैं।

9. मुर्गियां गर्मी में सर्दी के मौसम की अपेक्षा चार गुना ज्यादा पानी पीती है इसलिए दिन में कम से कम 4 बार ठंडा व ताजा पानी मुर्गी को पीने के लिए देना चाहिए।

10. पानी में 0.25 प्रतिशत नमक मिला देने स मुर्गियां ज्यादा पानी पीती हैं इससे वजन भी बढ़ता है। गर्मी में पानी में गुड या शीरा मिलाना भी फायदेमंद रहता है।

11. गर्मियों में क्योंकि मुर्गियां कम खाती हैं। इसलिए जितने पोषक तत्व उन्हें मिलने चाहिए नहीं मिल पाते। इस कमी को पूरा करने के लिए दाने में उर्जा और विटामिन की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए।

12. मुर्गियों में गर्मी का प्रभाव सुबह 11 बजे से रात 9-10 बजे तक अधिक पड़ता है एवं दाना खाने के बाद गर्मी का असर और बढ़ जाता है। इसलिए मुर्गियों को सुबह में व शाम में दाना चाहिए दोहपर के समय दाना नहीं देना चाहिए तथा रात के समय मुर्गीघर में प्रकाश के लिए बल्व जलाये इससे मुर्गी अधिक दाना खायेंगी। मुर्गी के आहार में अच्छे उत्पादन हेतु कम से कम 18 प्रतिशत प्रोटीन होना चाहिए।

13. गर्मी के समय आहार देते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि मुर्गियां को आहार ठंडे समय अर्थात सुबह 9 बजे से पहले या शाम को 6 बजे के बाद एवं इसी समय एवं ताजा पानी देना चाहिए।

14. पानी गर्मी के दिनों मे ठंडा पिलाना चाहिए, हो सके तो दिन के हर पानी में इलेक्ट्राल का उपयोग करना चाहिए।

15. मुर्गी प्यासी बिल्कुल नहीं रहनी चाहिए तथा ठंडा पानी उपयोग में लाना चाहिए।

16. पानी के छींटे देने से आहार की छोटी-छोटी गोलियां बन जाती है जिससे मुर्गी चाव से खा सकती है ऐसा करने से गर्मी में आहार उपभोग समान्य हो जाता है तथा उत्पादन पर भी असर नहीं पड़ता है।

17. गर्मी के मौसम में दाने में कैल्शियम की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए।

18. प्रति किलो दाने में 150 मिली ग्राम विटामिन सी मिलाने से गर्मी के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

19. गर्मी के मौसम में दिन के समय दाना कम व पानी ज्यादा पिलाना चाहिए।

20. मुर्गियों के दाने के बर्तन / फीडर जो दिन भर में कम से कम बार-बार हिला कर देना चाहिए।

21. अण्डादेय मुर्गियां जो कि पिंजडों में है को स्प्रे की सहायता से गीला करते रहना चाहिए एवं मुर्गी आहार के ऊपर शीट बिछा कर स्प्रिंकलर से गीला करते रहना चाहिए। उपरोक्त बातों का अगर ध्यान रखा जाये तो गर्मी के मौसम में भी मुर्गियों से उचित उत्पादन किया जा सकता है।

जून महीने के पहले पखवाड़े के मुख्य कृषि कार्य

डॉ. डी.डी. नारंग, रिटा. प्रोफैसर कीट विज्ञान, पी.ए.यू. लुधियाना

फसलों के मुख्य कार्य :

धान : * धान की बढ़िया किस्म और पानी की बचत करने के लिए, धान की रोपाई हमेशा जून के दूसरे पखवाड़े करें। इससे तने के कंचुए का प्रकोप भी कम होता है।

* जो पनीरी 15 दिन की हो तो उसे 26 किलो यूरिया प्रति एकड़ ओर डाल दें और निरंतर हल्का पानी देते रहें।

* जब पनीरी 20-25 सै.मी. ऊँची हो जाए या 6-7 पत्तों वाली हो जाए तो पनीरी उखाड़ कर खेतों में लगाओ।

* धान को 10 जून के बाद खेतों में लगाना शुरू कर दें।

* यदि धान की खड़ी पनीरी के पत्ते भूरे दिखाई दें तो 10 किलो जिंक सल्फेट हेपटा हाईड्रेट या 6-5 किलो जिंक सल्फेट मोने हाईड्रेट को बराबर की सुखी मृदा में मिलाकर कमी वाले स्थान पर फौरन डालें और हल्का पानी जरूर लगायें।

* यदि पनीरी के पत्तों के किनारे पीले दिखाई दें तो 500 से 1000 ग्राम फैरस सल्फेट को 100 लीटर पानी में घोल के प्रति एकड़ छिड़काव करें। दो या तीन स्प्रे ऐसे आवश्यकता मुताबिक करें।

बासमती : * पंजाब बासमती 2, पूसा बासमती 1121, सुपर बासमती और पूसा बासमती 1 की पनीरी व जून के पहले पखवाड़े में बोऐं।

कपास/नरमा : * कपास/नरमा के पौधों को विरला करने का समय पहली सिंचाई या भारी वर्षा होने के बाद करें।

* बी.टी. की दोहरी किस्मों के पौधों के बीच की दूरी 75 सै. मी. रखें।

* आम नरमें की किस्मों में 60 सै.मी. रखें और देसी कपास के पौधों के बीच की दूरी 45 सै. मी. रखें।

* खरपतवार के अंत के लिए पहले गोभी, पहले पानी से पहले करें।

* मारी किस्मों को आधी सिफारिश की गई नाईट्रोजन तत्व (15 से 30 किलो किस्मों मुताबिक) पौधे विरले करते समय अवश्य डाल दें।

* पहला पानी बुवाई से 4-6 सप्ताह बाद और इसके बाद पानी 2-3 सप्ताह बाद लगाओ।

* खाकी जुँआ/हरा चेपा आदि की रोकथाम के लिए 40 मि.ली. कोनफी डोर 200 एम.एल. या 40 ग्राम एकटारा 25 ताकत को 100 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे प्रति एकड़ करें।

* नीम पहाड़ी पद्वतियों में मक्की की बुवाई शुरू की जा सकती है।

* मक्की की पी.एम.एच-1, पी.एम.एच-2, जे.एच. 3459, केसरी, प्रभात, पंजाब स्वीट कोरन-1, उन्नत किस्मों का इस्तेमाल करें।

* बुवाई से पहले बीज को बाविस्टन या डोरोसिल दवाई से सोध लें। एक किलो बीज के पीछे 3 ग्राम दवाई काफी है।

मूंगफली : * सिंचाई परिस्थितियों में इसकी बुवाई जारी रखें। बुवाई के लिए 36 किलो बीज एम-548 किस्म का या 381 किलो बीज, एम-522 या एस. जी.84 का प्रति एकड़ डालो।

* बुवाई से पहले बीज को 5 ग्राम थीरम या 3 ग्राम इण्डोफिल एम-45 प्रति किलो बीज के हिसाब से अवश्य सोधे ताकि मूंगफली को गीची के गाले से बचाव समय पर हो जाये। इसके साथ-साथ बुवाई से पहले खेत में थिमट 10 जी दानेदार या 13 किलो फयूराडान 3 जी दानेदार दवाई खेत में अच्छी तरह एकसार डाल दें ताकि सफेद सूण्डी और दीमक से बवाच भी समय पर हो जाये।

नोट : खेत की अंतिम जुताई समय 50 किलो सुपर फास्फेट और 13 किलो यूरिया प्रति एकड़ डाले और गन्धक की कमी को पूरा करने के लिए 50 किलो जिप्सम भी खेत में अवश्य मिला दें।

खरीफ की दालें : * फूल-फलियों से भरी हुई सठी मूंगी की फसल पर 100 मि. ली. मैलाथियान 50 ताकत या 120 मि.ली. मैटासिस्टाक्स 25 ताकत को 100 ली. पानी में घोल कर स्प्रे करें ताकि खाकी थरिप कीट से बचाव आसानी से हो जाये।

* अरहर की किस्में जैसे कि ए.एल. 201, ए.एल. 15 की बुवाई शुरू करें। बीज को कैप्टान दवाई @ 3 ग्राम प्रति किलो के हिसाब से सोधे। बुवाई से पहले खेत में 100 किलो सुपर फास्फेट और 11 किलो यूरिया प्रति एकड़ अवश्य मिलायें।

गन्ना : * गन्ने की खड़ी फसल में 65 किलो यूरिया प्रति एकड़ अवश्य डाल कर हल्का पानी लगा दें। गन्ने को पानी आवश्यकता मुताबिक 7-12 दिनों बाद, पानी देते रहें।

* काली बग्ग (चींटी जैसी) पौधों की गोभों में बैठकर रस चूस लेती है जिससे गन्ने का बढ़ाव रुक जाता है। इस दुश्मन कीट को मारने के लिए 350 मि. ली. 20 ताकत को 400 लीटर पानी में घोलकर स्प्रे करें। यदि पत्तों पर लाल जुंओं का प्रकोप दिखे तो 400 मि.ली मैलाथियान 50 ताकत को 100-125 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें।

हरे चारे संबंधी : * बीज वाली बरसीम की फसल की कटाई करके, बीज के रख-रखाव का काम ध्यान से करें।

* मकई, चरी, बाजरा, ग्वारा, रवाह आदि चारे की फसलों की बुवाई कर काम जारी रखें।

सब्जियों की काशत संबंधी कार्य : * खरीफ के प्याज़ की किस्में एन-53 और एग्रीफियूड डारक रैड किस्मों की पनीरी तैयार करने के लिए, 5 किलो बीज को 8 मरले स्थान में लगाकर एक एकड़ की नर्सरी तैयार करें।

* गोभी की अगेती किस्मों की पनीरी तैयार करने के लिए 500 ग्राम बीज प्रति मरला स्थान में लगाकर एक एकड़ की नर्सरी तैयार करें। यदि बैंगनों की पनीरी तैयार करनी हो तो 300 ग्राम बीज प्रति मरला डालें।

* भिण्डी की किस्में पंजाब-8 या पंजाब-7 की बुवाई जारी रखें।

* मूली की किस्में पूसा चेतकी और पंजाब अगेती की बुवाई कुण्डों पर करें।

* खड़ी हुई सब्जियों को 4 से 7 दिनों बाद आवश्यकता मुताबिक पानी अवश्य देते रहें।

बागवानी संबंधी खेती कार्य : * नये पौधों को गर्मी से बचाने के लिए चूने का घोल पौधों के तनों पर अवश्य लगाओ।

* अंगूरों के गुच्छों पर 0.2% जीरम दवाई का स्प्रे अवश्य करें ताकि अंगूरों को गलने की बीमारी कम लगे।

* संतरे, मालटे और आम/नाशपत्ती पर बोर्डो मिश्रण 2:2:250 का स्प्रे करें ताकि फंफूदी की बीमारियों का प्रकोप कम हो जाये।

* बेरों की छंटाई का काम जारी रखें।

* फलदार बागों को पानी अवश्यकता मुताबिक देते रहें। लीची को 7 दिनों बाद पानी लगाओ और अंगूरों को तीन सप्ताह बाद पानी दें।

* आड़ू के पौधों पर 250 मि.ली. सूमीसीडीन 20 ताकत को 500 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें ताकि फूलों की मक्खी का नुकसान कम हो।

फूलों संबंधी कार्य : * फूलों के पौधों को दो बार सप्ताह में पानी दें। गमलों में लगे पौधों को 2-3 बार पानी सप्ताह में अवश्य लगाओ।

* घास के लाअन को सप्ताह में दो बार पानी दें।

* गुलाब की सुखी टहनियों को काटते रहें और हल्की सिंचाई भी करें।

* बोगन विलियों के पौधों की कांट-छांट समय पर करते रहें।

खेती के विशेष कार्य :

* पापलर के पौधों को सप्ताह बाद पानी अवश्य लगाओ।

* पापलर के तीन वर्ष से ज्यादा प्लांटेशन में हरे चारे जैसे कि बाजरा, मक्की, मक्कचरी और गिन्नी घास आदि की काशत भी कर सकते हैं।

* यदि पत्ता लपेट सुण्डी का प्रकोप पापलर के पौधों पर हो जाये तो 600 मि.ली. मोनोकरोटोफास 36 ताकत को 200- 250 लीटर पानी में घोलकर स्प्रे करें।

मधुमक्खी के रख-रखाव संबंधी

* गर्मी से बचाव करने के लिए कटुंबो को हमेशा घनी छाया नीचे रखें।
* कटुंबों के लिए हवा के आने-जाने का योग्य प्रबन्ध करें तांकि हवा तो आसानी से निकल सके परन्तु मक्खियाँ बाहर न निकल सकें।
* पानी का प्रबन्ध कलोनियों के नज़दीक करें। कलोनी नीचे रखे स्टैंडों के पांवों नीचे पानी के ठुले रखकर भी मक्खियों के लिए पानी का प्रबन्ध किया जा सकता है और साथ ही चींटियों के प्रकोप से भी आसानी से बचाव भी हो जाता है।
* गर्मी के मौसम में बरसीम और सूरजमुखी फसलों का पका हुआ शहद कटुंबों में से अवश्य निकाल लें।
* मधुमक्खी कटुंबों से चिचड़ियों और बीमारियों से बचाने के लिए मधुमक्खी के विशेषज्ञों/वैज्ञानिकों के साथ मिलकर समय पर प्रबन्ध करें।

गेंदे की उन्नत खेती

भारतीय पुष्प उद्योग में गेंदे का प्रमुख स्थान है क्योंकि आमतौर पर इसका प्रयोग धार्मिक स्थलों एवं सामाजिक अवसरों पर होता है। आजकल फूलों का व्यापार दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। पहले फूलों का प्रयोग अधिकतर शहरी क्षेत्रों तक सीमित था परन्तु आर्थिक स्तर पर सुधार होने के बाद अब फूलों का उपयोग विभिन्न उत्सवों पर मध्यम परिवारों में भी होने लगा है। हरियाणा प्रदेश देश की राजधानी दिल्ली के नजदीक है और यहां की जलवायु एवं भूमि भी फूलों की खेती दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और फूलों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए आसानी से उगाया जाने वाला ऐसा एक लोकप्रिय फूल गेंदे का है। आमतौर पर शहरों के पास गेंदे की खेती मुख्य रूप से फूलों के लिए की जाती है जिससे अन्य फसलों की तुलना में अधिक लाभ मिलता है। यदि किसान भाई इसकी व्यावसायिक खेती करें तो अच्छी आमदनी का विकल्प बन सकता है और साथ ही मच्छर–मक्खियों एवं सूत्रकृमियों की संख्या को भी नियंत्रित करता है। गेंदे की खेती बागों एवं सब्जियों के बीच में पंक्ति लगाकर भी की जा सकती है। उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों में इसकी तीन प्रमुख फसलें – ग्रीष्मकालीन, वर्षाकालीन एवं शीतकालीन हैं।

प्रजातियां एवं किस्में :- गेंदा एस्ट्रेसी वंश से संबंध रखता है और इसकी लगभग 33 जातियां हैं।

1. अफ्रीकी गेंदा (टेजीटिस इरेक्टा) :- इसके पौधे लगभग 80–100 सैं.मी. लंबे होते हैं और इसकी पत्तियां हल्के हरे रंग की एवं चौड़ी होती है तथा इसके फूल पीले एवं नारंगी रंग के और गोलाकार होते हैं। इनका आकार बड़ा होता है।

किस्में :- पूसा नारंगी गेंदा, पूसा बसंती गेंदा, क्रेकरजेक अफ्रीकन जायण्ट औरेन्ज एवं यलो, क्लाइमैक्स, जायण्ट सनसेट, इण्डियन चीफ, जुबली, मैमोथमम, गोल्डस्मिथ।

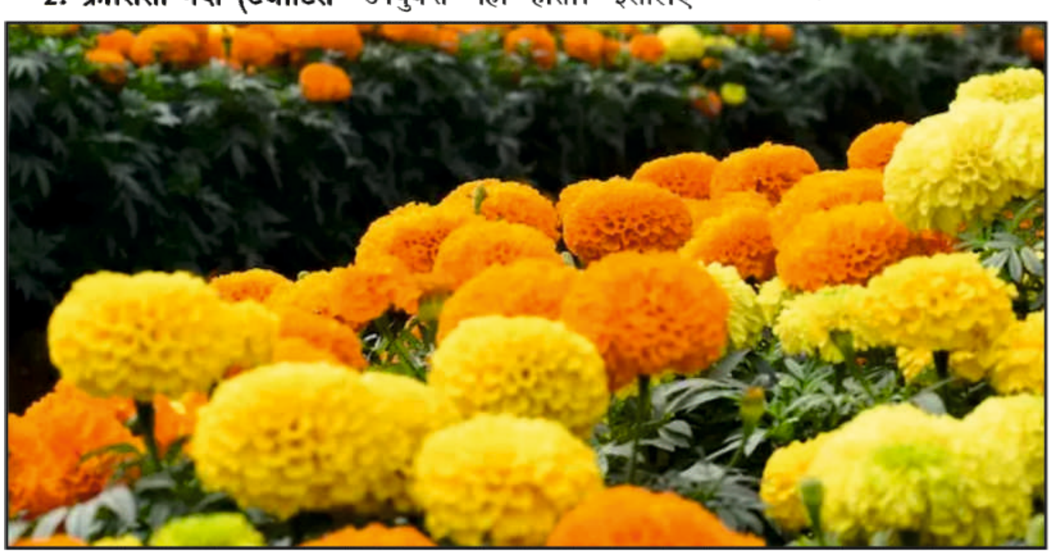

2. फ्रांसिसी गेंदा (टेजीटिस पेटुला) :- इसे फ्रेंच या जाफरी गेंदा भी कहते है। इसके पौधे छोटे (लगभग 20–60 सै.मी.) एवं अधिक फैलाव वाले होते है। पत्तियां गहरी हरी एवं तना लाल रंग का होता है। इसके फूल पीले, नारंगी, मटियाले, चित्तीदार, गहरे लाल या इनके मिश्रण के रंग के होते हैं।

किस्में :- रस्टी रैड, रैड ब्रोकेड, वटर स्कॉच, मिलोडी, पिटाइट येलो एवं औरेन्ज, पिटाइट हारमनी एवं लोकल।

जलवायु :- गेंदे के पौधे काफी सहिष्णु होते हैं। इसकी खेती ऊष्णकटिबंधीय एवं उपोष्ण जलवायु वाले भागों में पूरे साल की जा सकती है। हरियाणा की जलवायु गेंदे की खेती के लिए बहुत ही अच्छी है।

भूमि :- गेंदे की सफल खेती के लिए रेतीली मिट्टी जिसका पी. एच. 7.0–7.5 हो और जिसमें वायु संचार एवं जल निकास का उचित प्रबंध हो बहुत ही उपयुक्त होती है। क्षारीय एवं अम्लीय मिट्टी इसकी खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती। इसलिए किसान भाईयों को गेंदे की व्यावसायिक खेती के लिए उपयुकत स्थान का चुनाव करना अति आवश्यक है।

बीज की मात्रा :- 400–600 ग्राम बीज प्रति हैक्टेयर रोपाई के लिए पर्याप्त होता है।

पौध (नर्सरी) तैयार करने की विधि :- पौध तैयार करने के लिए भूमि को अच्छी तरह से गहरा खोद लेना चाहिए तथा उसमें गोबर की सड़ी हुई खाद मिलाकर उसको भुरभुरी बना लेना चाहिए। इसके बाद उसमें उभरी हुई क्यारियां 15 सैं.मी. ऊंची, एक मीटर चौड़ी तथा लंबाई आवश्यकतानुसार बनाते हैं। क्यारियां तैयार करने के बाद बीज को 6–8 सैं.मी. की दूरी पर और 1–2 सैं.मी. गहराई पर बोना चाहिए और बिजाई के बाद बीज के ऊपर हल्की गोबर की छनी हुई खाद की हल्की परत से ढक देते हैं। क्यारियों को जमाव होने तक सूखी घास या पत्तों से ढककर फव्वारे से सिंचाई करते रहना चाहिए और जमाव प्रारंभ होने पर घास व पत्ते हटा दें। इसके उपरांत नियमित सिंचाई करें।

पौध तैयार करने का समय :- ग्रीष्मकालीन फसल के लिए बीज की बुवाई जनवरी–फरवरी में कर लेनी चाहिए। वर्षाकालीन फसल के लिए मई–जून उचित रहता है और शीतकालीन फसल की बिजाई बाजार की मांग के अनुसार अगस्त से अक्तूबर में करनी लाभदायक रहती है।

पौधों की क्यारियों में रोपाई :- आमतौर पर बिजाई के एक महीने बाद पौधों को पौधशाला (नर्सरी) से निकालकर क्यारियों में लगा दिया जाता है। अफ्रीकी गेंदे को 40 सैं.मी. पौधे से पौधे एवं कतार से कतार की दूरी पर तथा फ्रांसीसी गेंदे को 30 सैं.मी. पौधे से पौधे एवं कतार से कतार की दूरी पर लगाते हैं। फ्रांसीसी गेंदे की कुछ किस्में जो अधिक फैलती हैं उन्हें 60 सैं.मी. पौधे से पौधे एवं कतार से कतार की दूरी पर लगाते हैं।

खाद एवं उर्वरक :- गोबर की खाद 40 टन प्रति हैक्टेयर रोपाई से एक महीने पहले खेत में मिलाएं। रासायनिक खाद के रूप में नाइट्रोजन 300 किलोग्राम, फास्फोरस 200 किलोग्राम एवं पोटाश 100 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें। नाईट्रोजन की आधी मात्रा, फास्फोरस एवं पोटाश की पूर्ण मात्रा खेत की तैयारी करते समय मिला दें। बाकी बची आधी नाइट्रोजन की मात्रा रोपाई के 4–5 सप्ताह बाद डालें।

पिंचिंग (फुनगयाना) :- जब खेत में पौधे अच्छी तरह स्थापित हो जाएं और उनकी वृद्धि शुरू हो चुकी हो तब पौधे की चोटी की कलिका को दो पत्तियों सहित ऊपर से तोड़ देना चाहिए। सामान्यत: यह प्रक्रिया रोपाई के 25–30 दिन बाद की जानी जरूरी होती है। यह प्रक्रिया करने से मुख्य तने से सहायक कलिकाएं बनना शुरू हो जाती हैं और इससे अधिक पैदावार होती है। आमतौर पर यह प्रक्रिया अफ्रीकी गेंदे में करना काफी लाभदायक एवं जरूरी होता है।

सिंचाई :- गर्मी के दिनों में पौधों को 4–5 दिन के अंतराल पर पानी देना चाहिए और सर्दियों में 10–15 दिन के अंतर पर सिंचाई करनी पड़ती है। वर्षा के दिनों में सिंचाई हल्की एवं आवश्यकतानुसार की जाती है।

खरपतवार नियंत्रण :- अच्छी पैदावार लेने के लिए 3–4 बार खरपतवार निकालना एवं गुड़ाई करना बहुत जरूरी है जहां पर अधिक खरपतवार उगते हों उस खेत में रोपाई से पहले खरपतवार नियंत्रण दवा का प्रयोग करने से खरपतवारों का प्रकोप कम होता है।

फूल आने का समय :- ग्रीष्मकालीन फसल अप्रैल–मई के मध्य में फूल देना आरंभ कर देती है। वर्षाकालीन फसल सितम्बर के मध्य में फूलों का उत्पादन आरंभ कर देती है और शीतकालीन फसल में नवम्बर के शुरू में फूल आना आरंभ हो जाता है।

फूलों की तुड़ाई :- पूरी तरह खिले हुए फूलों का सुबह या शाम के समय तोड़ना चाहिए। तोड़ने के तुरंत बाद ठण्डे स्थान पर फूलों को एकत्र करके उन्हें बांस की टोकरियों में भरकर बाजार में भेजना चाहिए। इसकी वजह से फूल काफी ताजा एवं वजनदार रहते है।

पैदावार :- अफ्रीकी गेंदे के ताजे फूलों की उपज लगभग 20–20 टन होती है जबकि फ्रांसीसी गेंदे की उपज 10–12 टन होती है।

रोग कीट एवं उनका नियंत्रण

1. पौधों का विगलन (डेम्पिंग ऑफ) :- यह बीमारी पौधों पर नर्सरी अवस्था में आती है। कोमल पौधों के तने जमीन के नजदीक से सड़ जाते है जिससे पौधे मुरझा कर सूखने लगते है। यह बीमारी फफूंदी के कारण होती है।

नियंत्रण :-

क. उपचारित बीज एवं नर्सरी का प्रयोग करें।

ख. बिजाई उभरी हुई क्यारियों में करें एवं सिंचाई फव्वारे से करें।

ग. बिजाई कतारों में करें।

घ. रोकथाम के लिए 2 ग्राम कैप्टान प्रति लीटर पानी में घोलकर 2–3 बार नर्सरी में छिड़काव करें।

2. पत्तों का धब्बा व झुलसा रोग :- इस रोग से ग्रस्त पौधों की पत्तियों के निचले भाग पर भूरे रंग के धब्बे बन जाते है जिससे पौधों की बढ़वार रूक जाती है। पत्तियों के किनारे झुलसकर पूरी पत्ती सूख जाती है तथा पौधे मर जाते हैं।

नियंत्रण :- इस बीमारी की रोकथाम के लिए डायथेन एम–45 फफूंदनाशक के 0.2 प्रतिशत घोल के 2–3 छिड़काव करने पड़ते हैं।

3. कली एवं फूलों का सड़ना :- इस रोग से ग्रस्त कलियां काली पड़ जाती है और फूल नहीं बनते व जो बनते भी है वे सड़ जाते है। इससे पैदावार घट जाती है।

नियंत्रण :- डायथेन एम–45 फफूंदनाशक के 0.2 प्रतिशत घोल के 2–3 छिड़काव करें।

4. लाल मकड़ी :- गेंदे में लाल रंग की मकड़ी अपना जाल बनाकर पौधों को ढक देती है और पौधे से रस चूसकर हानि पहुंचाती है और अंत में पौधे सूखकर मर जाते है।

नियंत्रण :- इसकी रोकथाम के लिए 0.2 प्रतिशत मैलाथियान का घोल बनाकर छिड़काव करें।

5. विषाणु रोग :- विषाणु रोग से पौधे सूखकर मर जाते है। इस रोग की रोकथाम के लिए किसी भी सिस्टेमिक दवा का 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

मक्का के प्रमुख रोग एवं उनका निदान

डॉ. अखिलेश सिंह एवं अन्नू, वैज्ञानिक, पर्वतीय कृषि अनुसंधान एवं प्रसार केन्द्र, धौलाकुआं

मक्का को विश्व में खाद्यान्न फसलों की रानी कहा जाता है, क्योंकि इसकी उत्पादन क्षमता खाद्यान्न फसलों में सबसे अधिक है। पहले मक्का को विशेष रूप से गरीबों का मुख्य भोजन माना जाता था परन्तु अब इसे औद्योगिक

फसल के रूप में माना जाता है। अब इसका उपयोग मानव आहार (25 प्रतिशत) के साथ-साथ कुक्कुट आहार (49 प्रतिशत), पशु-आहार (12 प्रतिशत), स्टार्च (12 प्रतिशत), शराब (1 प्रतिशत) तथा बीज (1 प्रतिशत) के रूप में किया जाने लगा है। मक्का से भारतवर्ष में 1000 से ज्यादा उत्पादन तैयार किए जाते है। मक्का का चूरा धनवान लोगों का मुख्य नाश्ता है। छोटे बच्चों के लिए मक्का का चूरा पौष्टिक भोजन है तथा इसके दानों को भूनकर भी खाया जाता है। शहरों के आस-पास मक्का की खेती हरे भुट्टे के लिए मुख्य रूप से की जाती है। आजकल मक्का की विभिन्न प्रजातियों को अलग-अलग तरह से उपयोग में लाया जाता है। मक्का को पोपकॉर्न, स्वीटकॉर्न एवं बेबीकॉर्न के रूप में पहचान मिल चुकी है।

भारत में लगभग 8.0 प्रतिशत मक्का की खेती खरीफ के मौसम में होती है। विश्व के कुल मक्का उत्पादन में भारत का 3 प्रतिशत योगदान है। अमेरिका, चीन, ब्राजील एवं मैक्सिकों के बाद भारत का पांचवा स्थान है। सभी खाद्यान्न फसलों की तरह मक्का को भी भारतवर्ष के लगभग सभी क्षेत्रों में उगाया जाता है। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, बिहार, हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर तथा उत्तरी पूर्व पर्वतीय राज्यों में मक्का मुख्यतया उगाई जाती है।

मक्का हिमाचल प्रदेश की खरीफ मौसम की मुख्य फसल है। प्रदेश में मक्का की औसतन उपज अच्छी है, फिर भी उपज को अच्छी किस्मों के बीज, अनुमोदित खादों के प्रयोग एवं खरपतवार नियंत्रण द्वारा बढ़ाया जा सकता है। इसकी अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों में वैज्ञानिक विधि द्वारा लगाए गए प्लाटों में 20-25 प्रतिशत अधिक पैदावार ली गई है। मक्का की पैदावार बढ़ाने के लिए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

मक्का के प्रमुख रोग निम्नलिखित हैं:-

1. तना गलन और सड़न

रोग :- यह एक जीवाणुजनित रोग है जो Erwinia Chrysanthemi pv.zzea द्वारा होता है। इस के लक्षण पौधों में झण्डे निकलने के समय नजर आते हैं। सर्वप्रथम पौधे की ऊपर की पत्तियां सूखना शुरू हो जाती हैं। निचली पोरियां जलसिक्त होकर मुलायम हो जाती है। ऐसे लगता है, जैसे कि तना पानी में उबाला गया है। ऐसे पौधे कमजोर हो जाते हैं और हवा चलने पर जमीन पर गिर जाते हैं। बीमारी वाले पौधों से शराब या सड़ी मछली जैसी दुर्गन्ध आती है, जो कि इस रोग की प्रमुख पहचान है।

निदान :-

✓ हमेशा प्रमाणित किस्मों का स्वस्थ बीज बोना चाहिए।

✓ बुआई देर से (जून के अन्त या मध्य जुलाई तक) करने पर रोग का प्रकोप कम होता है।

✓ उर्वरकों विशेषकर पोटाश

और फास्फोरस खादों का प्रयोग संतुलित मात्रा में करना चाहिए।

✓ जल निकास का अच्छा प्रबन्ध करना चाहिए। रोगग्रस्त पौधों को खेत से बाहर निकाल देना चाहिए।

✓ झण्डे आने पर या बीमारी शुरू होने पर ब्लीचिंग पाऊडर (1.5 किलो प्रति बीघा) एक हफ्ते के अंतराल पर दो बार डालना चाहिए।

✓ पी.एस.सी.एल.-3438, नवीन, के.एच.-9451 नामक किस्में बोनी चाहिए।

2. भूरी धारीदार मृदुरोमिल आसित :- यह रोग Sclerophthora Ayssiae var.zeae नामक फफूंद द्वारा होता है। जब फसल की ऊंचाई घुटनों तक पहुंचती है तो पत्तों पर हल्के पीले रंग की लम्बी धारियां नजर आती है, जो कि बाद में भूरी लाल हो जाती हैं। कई धारियां आपस में मिलकर पत्तों को झुलसा देती हैं। पौधों का संक्रमण कम उम्र में होने से भुट्टे प्रायः नहीं बनते एवं समय से पूर्व ही मर जाते हैं।

निदान :-

✓ बुआई के लिए रोगरोधी किस्मों को चुनना चाहिए।

✓ पी.एस.सी.एल.-3438, के.एच.-101, के.एच.-517, पी. एस.सी.एल.-3455 व नवीन नामक किस्मों में यह रोग कम आता है।

✓ बीज का उपचार शुरू होने से कम से कम 10-15 दिन पहले बोना चाहिए, क्योंकि शुष्क मौसम के कारण रोग का प्रकोप कम और देर से होता है।

✓ बीज का उपचार एप्रान 35 डब्ल्यू.एस. (3.0 ग्रा/कि. ग्रा. बीज) से करना चाहिए।

✓ रोग शुरू होने पर डाईथेन एम.-45 (0.25 प्रतिशत) नामक दवा के घोल का छिड़काव करना चाहिए और प्रकोप के अनुसार इसे 7-10 दिन के अंतराल पर 3-4 बार दुहराना चाहिए।

✓ एक बीघे के लिए 50-60 लीटर घोल पर्याप्त होता है।

3. बैंडिड अंगमारी रोग :- यह रोग Rhizoctonia Solani नामक फफूंद द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण पौधों की जड़ों एवं झण्डे को छोड़कर सभी भागों पर प्रकट होते हैं। लगभग एक माह की फसल पर पत्तों व पर्णछन्दों पर भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। धब्बों से ग्रस्त भाग झुलस जाते हैं। अधिक प्रकोप की दशा में रोग भुट्टों व दानों पर भी फैल जाता है, फलस्वरूप दानों का बनना भी रूक जाता है। दूर से देखने पर रोगग्रस्त पौधा सांप की केंचुली की तरह नजर आता है।

निदान :-

✓ झुलसे पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।

✓ प्रतिरोधी किस्मों की बुआई करनी चाहिए।

✓ 40-50 दिन के पौधों से निचली रोगग्रस्त पत्तियां जलाकर नष्ट कर देनी चाहिए।

✓ बीज का उपचार स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स (16 ग्राम/कि.ग्राम) से करना चाहिए तथा रोग के लक्षण दिखाई पड़ने पर शीथमार (वेलिडामाइसीन) 2.7 मिली लीटर पानी के अनुपात में घोल बनाकर 10 दिन के अंतर पर 2-3 छिड़काव करना चाहिए।

4. भूरी चित्ती :- यह रोग Physoderma Zeae Maydis नामक फफूंदी द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण प्रायः पौधे के पर्ण-पटल, पर्णच्छद, तना और

कभी-कभी भुट्टे से नीचे वाला भाग ऊपर की अपेक्षा प्रायः अधिक रोगग्रस्त होता है। शुरू में रोग की अभिव्यक्ति हल्के पीले रंग के अनियंत्रित धब्बे के रूप में होती है। ये धब्बे अधिक संख्या में पाए जाते हैं। शीघ्र ही इनका रंग भूरा और बाद में जंग लगा सा हो जाता है। उग्र रूप से रोगग्रस्त पत्तियां समय से पूर्व ही मर जाती है। ऐसी दशा में तने पर पाए जाने वाले अधिकतर धब्बे पोरियों के पास पाए जाते हैं, जिससे पोरियों के ऊतक कमजोर हो जाने से पौधे गिर सकते हैं।

निदान :-

✓ खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए।

✓ फसल-चक्र अपनाना चाहिए तथा रोगरोधी किस्मों को बोना चाहिए।

✓ पौधे के गोभ में कैप्टान 50 डब्ल्यू.पी. या फरबम (2.0 ग्राम दवा/लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

✓ यह छिड़काव रेशे

निकलने के एक माह पहले करना चाहिए।

5. पत्तों का झुलसा रोग :- मक्का की पत्तियां पर Helminthosporium नामक फफूंद की 5 जातियां पाई जाती है इनमें से हिमाचल में दो H. turcicum तथा H.maydis अधिक आर्थिक महत्व की हैं।

क. टर्सिकम पत्ती झुलसा :- यह रोग के लक्षण पत्तियों पर लम्बे, दीर्घ, वृत्ताकार अथवा नाव के आकार वाले धूसर-हरा से लेकर कत्थई रंग के धब्बों के रूप में पाए जाते हैं। धब्बे पौध के नीचे वाली पत्तियों पर पहले पाए जाते हैं और धीरे-धीरे ऊपर वाली पत्तियों की तरफ बढ़ते हैं। उस समय पौधा भूरा हो जाता है और ऐसा लगता है, जैसे पाले से ग्रस्त हो।

ख. मेडिस पत्ती झुलसा :- यह गर्म व नम क्षेत्रों का एक प्रमुख रोग है, रोग के धब्बे पत्तियों पर छोटे बिन्दुओं से लेकर 1.25 सें.मी. चौडे और 3.75 सें.मी. लम्बे होते हैं और काफी संख्या में पाये जाते है। ये धब्बे अंडाकार, एक-दूसरे के सामानान्तर, भूरा-कत्थाई से लेकर कत्थई और लक्ष्य बिन्दु सदृश या एक केन्द्रिक (Target Like or Zonated) होता है प्रायः इनके किनारे गहरा-भूरा या बैंगनी रंग लिए होते हैं। ये टर्सिकम पत्ती झुलसा की अपेक्षा काफी छोटे, अधिक स्पष्ट एवं रंग में भिन्न होते हैं। कभी-कभी भुट्टों का सिरा भूरे के काले भुट्टा विगलन में बदल जाता है।

निदान :-

✓ प्रमाणित बीज और रोगरोधी किस्में उगानी चाहिए।

✓ बुआई से पहले बीज का थीरम नामक रसायन 2.5 ग्राम/कि.ग्राम के हिसाब से उपचार करना चाहिए।

✓ रोग का प्रकोप होते ही डाईथेन एम.-45 का छिड़काव (2.5 कि.ग्रा./हैक.) करना चाहिए और इसका छिड़काव 7-10 दिन के अंतराल पर 2-3 बार करना चाहिए।

गतांक से आगे

कृषि के लिये वरदान
जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण

डॉ. शंकर लाल और धर्मेन्द्र कुमार, नई दिल्ली

टीका लगाने की विधियां

बीज का टीकाकरण-टीका की धूल व पानी द्वारा:- राइजोबियम का प्रयोग बुआई से पहले किया जाता है। टीका की धूल को बीज में मिलाना सबसे सरल विधि है, लेकिन इस विधि में टीका बीज के साथ कम चिपकता है। टीका बीज में ढंग से चिपकाने के लिये कई विधियों का प्रयोग किया गया है। सबसे सरल विधि पानी से टीका की लेई बनाकर बीज में मिलाना है। इसकी दूसरी विधि है पानी से

भीगे में टीका की धूल मिलाना और बाद में बीज को सुखाना।

बीज का टीकाकरण चिपकने वाले पदार्थ से:- यदि चिपकने वाले पदार्थ की लेई बनाकर टीकाकरण किया जाये तो बीज से इनोकूलेन्ट्स अधिक मात्रा में किये जाते हैं। चिपकने वाले पदार्थों में 10 प्रतिशत गुड़ का घोल, सुक्रोज, शीरा, मिथाइल सेलूलोज, मिथाइल इथाइल सेलूलोज, बबूल को गोंद, ग्वार का गोंद, इत्यादि प्रमुख हैं। चिपकाने वाले पदार्थों से राइजोबियम सरलता से चिपक जाता है और उनके जीवित रहने की संभावना भी बढ़ जाती है।

बीज की गोली या छर्रा बनाकर:- बीज के छर्रे इसलिये बनाये जाते हैं कि राइजोबियम मिट्टी के क्षारीयपन से बच जाये। इसके साथ ही साथ बीज के छिलके में जो विषैले पदार्थ होते हैं, उससे अम्लीय उर्वरकों से भी रक्षा हो जाती है। छर्रे बनाने में जो पदार्थ प्रयोग किये जाते हैं, उनमें चूना, डोलोमाइट, जिप्सम, बैन्टोनाइट, चिकनी मिट्टी, रॉक फॉस्फेट और उनके यौगिक, टिटेनियम डाईऑक्साइट, टॉल्क पाउडर, मिट्टी, पांस और चारकोल प्रमुख हैं।

सीधे खेत में इनोकुलेशन या टीकाकरण:- जहां बीज का टीकाकरण संभव नहीं होता है, वहां भूमि में सीधे टीकाकरण करते हैं। इस विधि में राइजोबियम के दानों या कणों पर आधारित उर्वरक के साथ पंक्तियों में बुआई की जाती है। इसके साथ ही साथ यह छोटे पौधों के पुनः टीकाकरण में भी लाभदायक होता है। इस विधि में राइजोबियम की पतली लेई (सैलरी) भी नाली में छिड़की जा सकती है।

राइजोबियम की भूमि में स्थिति

दलहनी फसलों की जड़ों में ग्रंथिकाओं के बनने की स्थिति से राइजोबियम की सक्रियता का पता लगाया जा सकता है। सर्वेक्षण के द्वारा ग्रंथिकाओं को गिनने पर राइजोबियम की स्थिति चना और अरहर में इस प्रकार आंकी गई है। अल्प (1-10 ग्रंथिकाएं/पौधा अरहर में और 1-5 ग्रंथिकाएं/पौधा चना में), मध्यम (11-20 ग्रंथिकायें अरहर में और 6-10 ग्रंथिकाएं/पौधा चना में), अच्छा (21-40 ग्रंथिकाएं/पौधा अरहर में और 11-20 पौधा ग्रंथिकाएं/पौधा चना में) और बहुत अच्छा (40 ग्रंथिकाएं/पौधा अरहर में)। सर्वेक्षण से यह भी ज्ञात हुआ है कि चना के लगभग 50 प्रतिशत क्षेत्रों में ग्रंथिकाएं अल्प पाई गई, जब कि अरहर में यह स्थिति लगभग 90 प्रतिशत क्षेत्रों में पाई गई है।

राइजोबियम की उन्नत प्रजातियों की दक्षता

राइजोबियम की उन्नत प्रजातियों की दक्षता दलहनों की पैदावार में वृद्धि होने से आंकी जाती है। प्रदर्शनों से स्पष्ट हुआ है कि राइजोबियम से बीज में टीका लगाने से दलहन की पैदावार में आशातीत वृद्धि अन्य लागतों से हुई वृद्धि से बहुत अधिक होती है। तीन वर्षों में हुये प्रदर्शनों में राइजोबियम से टीकाकरण करने से जो दहलनों की पैदावार में औसतन वृद्धि हुई है, वह है क्रमशः 6.5 से 30.9 प्रतिशत, 1.2 से 40.9 प्रतिशत और 0 से 37 प्रतिशत दलहनवार पैदावार में वृद्धि इस प्रकार प्राप्त हुई: मूंग (0 से 60 प्रतिशत) और उड़द (0 से 77.3 प्रतिशत)। राइजोबियम की उन्नतशील प्रजातियों और अतिथेय फसल की प्रजातियों के बीच प्रतिस्पर्धा भी पाई गई। जैसे चना की 9 उन्नतशील प्रजातियों में आई.सी.-149 सबसे अच्छी पाई गई। उसी प्रकार अरहर में प्रजाति आई.एच.पी.-195 सर्वोत्तम पाई गई।

जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण से दलहनी पैदावार बढ़ने में बाधाएं:- शोध प्रक्षेत्रों और किसानों के खेतों में राइजोबियम पर किये गये प्रदर्शनों में भली प्रकार राइजोबियम की उपयोगिता दर्शाई गई है। इसके होते हुए राइजोबियम टीकाकरण किसानों में उतना लोकप्रिय नहीं हुआ है, जितनी अन्य लागतें हुई हैं, इसके लिये निम्नलिखित बाधाएं उत्तरदायी हैं:

राइजोबियम का उत्पादन कम होना:- एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिये 500 ग्राम राइजोबियम टीके की आवश्यकता होती है। देश में दलहन का क्षेत्रफल 240 लाख हैक्टेयर है। अतः प्रतिवर्ष 1,20,000 टन राइजोबियम की आवश्यकता होती है। उसके विपरीत देश में प्रतिवर्ष राइजोबियम का उत्पादन मात्र 2,000 टन होता है। इस प्रकार प्रति वर्ष 1,18,000 टन राइजोबियम की कमी रहती है, जिसके कारण प्रत्येक क्षेत्र में इसका प्रयोग नहीं हो पाता है।

संवाहक (इनोकूलेन्ट) की गुणवत्ता ठीक न होना:- यद्यपि राइजोबियम के लिये मानक तैयार कर लिये गये हैं, जिसके अनुसार नमूनों में राइजोबिया की संख्या गिनी जाती है, जो वास्तविक राइजोबियम नहीं हो सकते हैं, बल्कि बैक्टीरिया सम्मिलित हो सकते हैं।

अन्य लागतों की तुलना में राइजोबियम पर प्रचार-प्रचार कम हुआ है।

प्राकृतिक कारक:- इन कारकों में जैविक व अजैविक दबाव आते हैं। जैसे जैविक दबाव में प्राकृतिक राइजोबियम का उन्नतशील राइजोबियम में प्रतिस्पर्धा का होना है, जिसमें प्राकृतिक राइजोबियम सफल रहते हैं। अजैविक कारकों में तापमान, नमी, भूमि का पी-एच-मान आदि आते हैं, जिनका राइजोबियम के ऊपर कुप्रभाव पड़ता है।

* संवाहक का अच्छे गुण न होना।

* भंडारण और स्थानांतरण की बेहतर सुविधाओं का न होना, जिसके कारण राइजोबियम कम समय तक जीवित रहता है।

राइजोबियम कल्चर से दलहनों की पैदावार बढ़ाने की संभावनाओं के लिये सुझाव

शोध

* अधिक कुशल राइजोबियम की प्रजातियों का विकास करना।

* ऐसी प्रजातियों का विकास करना जो भूमि का क्षारीयपन, जल भराव, उच्च तापमान, शुष्कावस्था, आदि के लिये सहनशील हों।

* दलहन की इस प्रकार की प्रजातियों का विकास करना जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन का अधिक मात्रा में स्थिरीकरण करें।

* मैदानी क्षेत्रों के लिये राइजोबियम की प्रजातियों का विकास करना।

* राइजोबियम कल्चर के भंडारण के लिये उपयुक्त परिस्थितियों का विकास करना।

* राइजोबियम के उपयुक्त संवाहक को विकसित करना।

उत्पादन

* राइजोबियम उत्पादन इकाइयों को मदर कल्चर उपलब्ध कराना।

* वर्तमान में उत्पादन इकाइयों को सुदृढ़ करना जिससे वे अधिक से अधिक राइजोबियम पैदा कर सकें।

* राज्य कृषि विश्व-विद्यालयों, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् की संस्थाओं और गैर सरकारी संस्थानों में नई उत्पादन इकाइयों को स्थापित करना।

* प्रत्येक उत्पादन इकाई के पास उचित क्षमता का फर्मेंटर होना चाहिए, जिससे वे राइजोबियम का उत्पादन कम समय में अधिक से अधिक कर सकें।

* पॉलीमर आधारित संवाहकों को प्रयोग में लाना चाहिये, जिससे अधिक से अधिक राइजोबियम जीवित रह सकें और उनका जीवत स्तर बढ़ सके।

भंडारण

* प्रत्येक उत्पादन इकाई के पास इनोकुलेंट के भंडारण की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। भंडारण की व्यवस्था जहां राइजोबिया उपयोग होना है, उसके समीप होनी चाहिये।

स्थानांतरण

* राइजोबियम को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने के लिये वातानुकूलित वाहन की व्यवस्था होनी चाहिये, जिससे अधिक समय तक राइजोबियम जीवित रह सकें।

प्रचार के कार्यक्रम

* किसानों के बीच राइजोबियम के उपयोगी होने का प्रचार किया जाये।

* किसानों और प्रसार कार्यकर्ताओं को राइजोबियम उपयोग करने का प्रशिक्षण दिया जाये।

* राइजोबियम पर किसानों के खेतों पर प्रदर्शन किये जायें।

धामिया कलां गांव के पूर्व पटवारी ने अपनाया बीच का रास्ता

धान पर बासमती को तरजीह, पानी व पैसों की बचत

राज्य के किसानों ने धान लगाने की तैयारियां शुरू कर दी है। सरकार और खेतीबाड़ी विभाग लाख कोशिशों के बावजूद धान-गेहूं फसल-चक्र को नहीं तोड़ पाए। लेकिन जिले के गांव धामिया कलां के पूर्व पटवारी हरजीत सिंह ने बीच का रास्ता निकाल रखा है। वह 20 सालों से 12-15 एकड़ में बासमती लगा रहा है, जिससे धान की तुलना में खाद-पानी का खर्च बहुत कम, जबकि आमदनी ज्यादा होती है।

हरजीत के अनुसार, वह जून में बासमती-1509 की रोपाई कर देता है। रोपाई के पहले 72 घंटे तक वह खेतों में पानी भर कर रखता है। जैसे ही पौधे जड़ जमा लेते हैं, तब फसल में पानी भर कर रखने की जरूरत नहीं पड़ती। इसके बाद वह फसल को पानी गेहूं की तर्ज पर ही लगाता है। एक हफ्ते में एक बार। जून के बाद अक्सर रुक-रुक कर बारिश से कई-कई दिन तक मोटर चलाने की जरूरत नहीं पड़ती। फसल 115 दिन में तैयार हो जाती है। पैदावार प्रति एकड़ 22-25 क्विंटल तक हो जाती है। पिछले 20 सालों के दौरान सिर्फ एक बार बासमती का दाम कम लगा था। वैसे, इसका रेट 4000 से 5500 रुपए प्रति क्विंटल तक लगता रहा है, जिसके कारण अच्छा मुनाफा हो जाता है।

बासमती की तुलना में धान पर खर्च दोगुणा

हरजीत ने कहा कि वह बासमती में डी.ए.पी. खाद नहीं डालता। इससे पहले ली गई गेहूं की फसल में जो डी.ए.पी. डाला जाता है, वही बासमती के काम भी आ जाता है। 115 दिन में प्रति एकड़ 3 बोरी यूरिया, 20 किलो जिंक, 1 बोरी पोटाश और 2 स्प्रे करनी पड़ती है।

जून माह के कृषि कार्य

गतांक से आगे

बेर :- इस महीने के दूसरे सप्ताह तक बेर की कटाई-छंटाई का काम समाप्त कर लें और पौधों की छतरी तक गुड़ाई करें। प्रति पेड़ लगभग 50-100 कि. ग्रा. गोबर की सड़ी खाद अच्छी तरह मिलाकर गहरी सिंचाई करें। बत्तर आने पर गहरी जुताई करें।

अमरूद :- नए पौधों को गर्मी व लू से बचाएं और सिंचाई अवश्य करें।

आड़ू :- इस महीने के पहले सप्ताह तक शरबती और मैचलैस

किस्म के फल पकने शुरू हो जाएंगे, इस लिए उनकी तुड़ाई का प्रबंध करें और हल्की सिंचाई भी करते रहें और तुड़ाई से पहले सिंचाई बंद कर दें। नए पौधों के तनों के साथ मिट्टी चढ़ाए।

आम :- बागों की सिंचाई नियमित रूप से करते रहें। छोटे पौधों को गर्मी व लू से बचाएं। नाईट्रोजन की बाकी बची मात्रा भी इस महीने डालें। पके हुए फलों की ग्रेडिंग करके बाजार में भेजें।

पशुओं में :

गाय-भैंस :- बरसात के मौसम में गाय और भैंसों में गलघोटू बीमारी लग सकती है और अधिकतर पशु इस बीमारी के शिकार हो जाते हैं। बीमारी फैलने के बाद इलाज कठिन व महंगा होता है। कट्टे और कट्टियों में यह रोग अधिक आता है और इनमें मृत्यु अधिक होती है। इस रोग से पशुओं को बचाने के लिए गलघोटू रोग से बचाव का टीका लगवा लेना चाहिए। यह टीका बरसात

से पहले लगे, तो गाय-भैंसों को बरसात में यह रोग नहीं लगेगा। यह टीका पशु चिकित्सालय से मुफ्त उपलब्ध होता है।

फड़ सूजन (ब्लैक-क्वार्टर) या इसे पुट्ठे सूजन का रोग भी कहा जाता है। यह गाय-भैंसों में होने वाला एक और भयानक रोग है। यह रोग भी अधिकतर बरसात में होता है। इसमें पशु पिछली टांगों से लंगड़ाकर चलता है तथा खाना-पीना छोड़ देता है। अधिकतर पशु रोगग्रस्त होने पर मर सकते हैं। अपने पशुओं को, जिनकी आयु 4 मास से 3 वर्ष तक की हो, ब्लैक क्वार्टर की बीमारी से बचाव का टीका अपने समीप के पशु चिकित्सालय से लगवा दें। यह टीका मुफ्त में लगता है। इस टीके के लगवाने से पशुओं को एक वर्ष तक यह रोग नहीं लगते है। यह सभी टीके पशुओं को पशु चिकित्सक की सलाह से ही लगवाएं।

जून माह में मुंह व खुर-पका रोग का टीका पशुओं को लगवाएं। संकर नस्ल के पशुओं को यह रोग अधिक लगता है। इस रोग में पशुओं को बुखार हो जाता है, मुंह और पांव में छाले पड़ जाते हैं और पशु खाना छोड़ देते हैं। पशु में काम करने की क्षमता घट जाती है। दूध देने वाले पशुओं का दूध घट जाता है और किसानों को इससे बहुत क्षति होती है। इससे बचाव हेतु अपने पशु को चिकित्सालय से टीका अवश्य लगवाएं।

इस मास में हरी ज्वार व मक्का, जो अप्रैल में बोई हो, पशुओं को खिलाने के लिए उपलब्ध होगी। इस बात का ध्यान रखें, कि जिस ज्वार की कई बार सिंचाई न की गई हो तथा लंबाई में बहुत छोटी रह गई हो, उसे पशुओं को कभी नहीं खिलाना चाहिए, क्योंकि इसमें एक जहरीला पदार्थ (एन. सी.एन.) होता है, जो पशुओं के लिए हानिकारक होता है। ऐसी ज्वार को अच्छी बरसात या एक-दो सिंचाई के बाद, जब इसमें बाल या सिट्टे निकलने शुरू हो जाएं तब पशुओं को खिलाना चाहिए

पशुओं की खुराक में प्रत्येक पशु को 50 ग्राम खनिज मिश्रण व 20 ग्राम नमक रोजाना चारे में देना चाहिए। इससे पशु चारा अधिक खाता है, चारे का अच्छा पाचन भी होता है, दूध की मात्रा अधिक होती है तथा वह समय पर नए दूध हो जाता है। इस माह में गर्मी खूब पड़ती है, जिससे पशुओं को बचाने के लिए पशुओं को दिन में कई बार साफ पानी पिलाना चाहिए और कई बर नहलाना चाहिए। लू से बचाने के लिए पशुओं को छायादार पेड़ों के नीचे रखें। भैंसों को दिन के समय जोहड़ या तालाब में रहने दें। पशुओं के घर साफ-सुथरे व हवादार स्थान पर बनाएं। भैंस ब्याने के 42 दिन बाद व गाय 25 दिन बाद नए दूध के लिए तैयार हो जाती है। अत: उन्हें कृत्रिम गर्भाधान से नए दूध कराकर अच्छी नस्ल के पशु उत्पन्न करवाएं।

ऐसे क्षेत्र, जो बाढ़ग्रस्त हो, उन्हें लीवरफ्ल्यूक नामक बीमारी फैल जाती है। यह बीमारी गंदे पानी व चारे के द्वारा फैलती है। इसके जीवाणु आंतों के द्वारा जिगर व पित्त की नली में पहुंच जाते हैं, जिससे पशु मर जाते हैं। इससे बचाने के लिए पशुओं को अपने पशु चिकित्सक के परामर्श से दवा पिलाएं।

भेड़ें :- भेड़ों में पुट्ठे सूजने के रोग से बचाव का टीका अपने

समीपस्थ पशु चिकित्सालय से लगवा दें। भेड़ों के पेट के कीड़े मारने के लिए अपने पशु चिकित्सक की सलाह से उन्हें समय-समय पर दवाई पिलाएं।

भेड़ तथा ऊन विकास केन्द्र में बने डिपिंग टैंक में अपनी भेड़ों को नहलाएं। इस माह में भेड़ों का प्रजनन चलेगा। अत: अच्छी नस्ल के बच्चे उत्पन्न कराने हेतु अच्छी नस्ल के मेंड़े भी भेड़ तथा ऊन विकास केन्द्र से प्राप्त हो सकते हैं।

घर-आंगन में :- गर्मी के मौसम में बच्चों के शरीर से दस्त एवं उल्टियों के रूप में लगातार पानी निकलने से बच्चों में निर्जलन हो जाता है, जिससे बच्चे की आंखें धंस जाती हैं तथा निर्जलन के गंभीर मामलों में सिर का तालू गिरने लगता है। बच्चा पेशाब नहीं करता तथा सुन्न पड़ जाता है तथा बेहोश हो जाता है। बच्चा श्वास भी जल्दी-जल्दी तथा कठिनाई से लेता है। मां को ऐसी स्थिति आने ही नहीं देनी चाहिए। यदि बच्चे को चार-पांच पतले दस्त आ गए हो, तो शीघ्र ही उसे नमक एवं चीनी का घोल बनाकर देना चाहिए। इससे उसमें पानी की कमी नहीं आएगी तथा बच्चे की हालत भी सुधरेगी। नमक व चीनी का घोल बनाने के लिए तीन चुटकी भर नमक, एक मुट्ठी भर चीनी, उबला और ठंडा किए हुए पांच कप पानी में अच्छी तरह मिलाएं। यदि उपलब्ध हो, तो आधे खट्टे नींबू का रस भी मिलाएं।

अतिसार में बच्चों को खिलाना-पिलाना जारी रखना बहुत जरूरी है। खाना-पिलाना जारी रखने से बच्चे जल्दी अच्छे हो जाते है और कुपोषण का शिकार नहीं होते। नमक और चीनी के घोल के साथ-साथ छोटे बच्चे का स्तनपान भी जारी रखें। बड़े बच्चे जो गाय-भैंस का दूध पीते है, बिना पानी मिलाए दूध पीना जारी रखें। इसके अतिरिक्त चावल का पानी, दाल का पानी, मूंग की धुली हुई दाल, ताजा बना हुआ खाना जैसे खिचड़ी, दलिया आदि थोड़ा-सा घी अथवा तेल डालकर ही पकाएं। दही, केला और उबला हुआ आलू भी दें।

इस महीने में अत्यधिक गर्मी होने के कारण ज्यादा से ज्यादा शुद्ध जल का प्रयोग करें। ताकि आप-अपने आपको दूषित जल से होने वाली बीमारियों से बचा सकें। शुद्ध जल के लिए आप जनता वाटर फिल्टर का प्रयोग कर सकते हैं। इसको कैसे बनाया जाए आप अपने क्षेत्र में कार्यरत जिला विस्तार विशेषज्ञ (गृह विज्ञान) से संपर्क स्थापित करें। इसके अतिरिक्त आप पानी को साफ करने के लिए क्लोरीन की गोलियां नजदीकी हस्पताल में भी ले सकते हैं।

* कच्चे आम के पन्ने का प्रयोग करके आप अपने आपको एवं परिवार को लू से बचा सकते हैं।

* सिरके मे प्याज का प्रयोग करके आप अपने आपको एवं परिवार को लू से बचा सकते हैं।

यदि इतना कुछ करने पर भी बच्चे की स्थिति में सुधार नहीं आता तो आप नजदीकी हस्पताल से संपर्क स्थापित करें।

फार्म प्रबंध

कृषि उत्पादों का अधिक मूल्य प्राप्त करने के लिए उचित ढंग से मंडीकरण करें। रबी फसलों की जिन्सों को अच्छा भाव लेने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें :

1. कटाई के बाद किसान, अपनी उपज को एक साथ ही मंडियों में न लाकर उसे धीरे-धीरे लाएं, जिससे उन्हें कठिनाई न उठानी पड़े तथा उनकी उपज का सही मूल्य उन्हें मिल सके।

2. फसल को जहां तक संभव हो सरकारी संस्था अथवा सहकारी सोसाइटी द्वारा बेचें तथा यह ध्यान रखें, कि उपज का न्यूनतम मूल्य प्राप्त हो।

3. अच्छी कीमत प्राप्त करने के लिए उपज को साफ-सुथरा करके तथा अच्छी बोरियों में भरकर मंडी में लाएं। इससे मंडी में भराई-सफाई का अतिरिकत खर्चा नहीं लगेगा।

4. किसान को अधिक कीमत प्राप्त करने के लिए बढ़िया और घटिया किस्म की फसलों को अलग-अलग बेचना चाहिए।

5. किसानों को चाहिए, कि वह अपनी फसल मंडी में तोलकर ले जाएं और बाद में पड़ताल के लिए तोल कराएं।

6. फसल को ग्रेड करा लेने के बाद उसकी उचित कीमत लगती है। कृषि विभाग द्वारा प्रमुख मंडियों में कृषि उत्पादों की ग्रेडिंग के लिए केन्द्र स्थापित किए गए हैं। इन केन्द्रों पर किसानों की उपज की नि: शुल्क ग्रेडिंग सुविधा उपलब्ध है।

7. विभिन्न जिन्सों (फसलों) के मिश्रण को मंडी में नहीं ले जाना चाहिए। उनको अलग-अलग बेचने पर ही अधिक लाभ होता है। जैसे गेहूं व जौ के मिश्रण की बजाय उन्हें अलग-अलग बेचने पर ही अधिक लाभ होता है।

8. फसल बेचने से पहले मंडी के भाव की जानकारी लेना अति आवश्यक है। किसान को विभिन्न मंडियों के भाव की जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। यह जानकारी अखबार, रेडियों का कृषि कार्यक्रम अथवा व्यक्तिगत संपर्क के माध्यम से प्राप्त हो सकती है।

9. जो किसान भाई अपनी जिन्स को रोक कर देर से बेचने की क्षमता रखते है तथा जिनके पास जिन्स के भंडारण की उचित व्यवस्था है, उन्हें फसल काटते ही मंडी में लेकर नहीं पहुंचना चाहिए। जिन्स की कम आवक होने पर बेचने से भाव अच्छे मिल जाते है व परेशानी भी कम उठानी पड़ती है।

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय द्वारा 'पंजाब अमृत' खरबूजे की किस्म 'बॉबी हाइब्रिड' का मुकाबला करेगी – डॉ. गोसल

दोआबा के लोकप्रिय लाल मिट्टी वाले डोना बेल्ट में घटते खरबूजे के उत्पादन को बचाने के प्रयास में – शाहकोट, लोहियां, कपूरथला और सुल्तानपुर लोधी में फैला – जो कि राज्य का पूर्व खरबूजा केंद्र था, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय (पीएयू) ने अपनी संकर, कम लागत वाली खरबूजे की किस्म 'पंजाब अमृत' विकसित की है। पीएयू के वैज्ञानिकों द्वारा वर्षों से विकसित की जा रही इस किस्म के नए लागत प्रभावी बीज को बढ़ावा देने के लिए पीएयू के कुलपति ने कपूरथला का पहला फील्ड दौरा किया। 2014-15 की तुलना में कपूरथला में खरबूजे का उत्पादन आधे से भी कम रह गया है। कपूरथला में अपने चरम पर 2,500 हैक्टेयर (6,000 एकड़) में उत्पादित खरबूजे का क्षेत्रफल घटकर इस साल आधे से भी कम रह गया है – केवल 900 हैक्टेयर (2,500 एकड़)। बीज की बढ़ती कीमतों, जलवायु परिवर्तन और तुषार के कारण किसानों ने मक्का की खेती को अपना लिया है – कपूरथला,

शाहकोट और रूपेवाल में 'धवाना' (तरबूज) मंडियों में सन्नाटा पसरा हुआ है – इस साल भी कोई अपवाद नहीं है। लाल मिट्टी वाले क्षेत्रों में खरबूजे के प्रति पहले जैसा उत्साह बहाल करने के प्रयास में – पीएयू पूरी ताकत लगा रहा है।

कृषि विज्ञान केंद्र, कपूरथला ने सब्जी विज्ञान विभाग, पीएयू, लुधियाना के सहयोग से खरबूजे की किस्म पर एक फील्ड डे का आयोजन किया, जिसमें पीएयू के वीसी डॉ. सतबीर सिंह गोसल ने कपूरथला के बरिंदपुर स्थित ईशा सिंह ढोट फार्म में 'पंजाब अमृत' किस्म को बढ़ावा देने के लिए पहली बार दौरा किया। इसमें आस-पास के गांवों के 70 से अधिक खरबूजे उत्पादकों ने भाग लिया। तुलना को प्रोत्साहित करने के लिए पंजाब अमृत और बॉबी (महंगा बीज संस्करण) संकर किस्मों के स्टॉल एक साथ रखे गए थे – बेहतर स्वाद, शेल्फ लाइफ, आकार और उपज। केवीके, कपूरथला के एसोसिएट डायरेक्टर (प्रशिक्षण) डॉ. हरिंदर सिंह ने कहा कि, 2014-15 के दौरान, क्षेत्र में खरबूजे की खेती अपने चरम पर थी। सुनहरी, मधु और हरा मधु किस्मों को प्राथमिकता दी गई थी। पीएयू द्वारा लगभग 2019 में बॉबी किस्म का विकास – जो अधिक मीठा है – ने खरबूजे के 70 प्रतिशत क्षेत्र में इसकी खेती को बढ़ावा दिया। हालांकि, इसकी आसमान छूती लागत ने किसानों को बड़ी संख्या में मक्का अपनाने के लिए मजबूर कर दिया, जो हमारे लिए चिंता का विषय रहा है। इसका मुकाबला करने के लिए, पीएयू ने सब्जी विज्ञान विभाग के प्रमुख डॉ. सतपाल शर्मा के तहत एक दशक या उससे अधिक समय तक पंजाब अमृत किस्म विकसित करना शुरू किया। आज का फील्ड दौरा इस संस्करण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से हाल ही में किए गए अभ्यासों में से एक है। इस साल किसानों को महंगे बॉबी खरबूजे के बीज की कीमत 1 लाख 8,000 से 1 लाख 40,000 रुपये के बीच पड़ी है, जबकि इसकी तुलना में पंजाब अमृत की कीमत मात्र 6,000 रुपये प्रति किलोग्राम होगी (एक किलोग्राम बीज एक एकड़ में फसल देता है)।

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें

खेती संदेश

हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र

कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर

एक वर्ष में 52 अंक

किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए

चंदों में विशेष छूट

एक वर्ष 500/- रुपए | दो वर्ष 800/- रुपए

पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :

90410-14575

KHETI DUNIYAN
TID - 62763351

चंदे भेजने हेतु QR कोड सकैन करें।

खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)

के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला

केन्द्र ने गलत फार्मूले पर एम.एस.पी. घोषित करके किसानों को एक बार फिर ठगा

गत् दिनों केन्द्र सरकार ने खरीफ फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) गलत फार्मूले ए2+एफ.एल. पर घोषित करके किसानों प्रति वर्ष की भांति एक बार फिर ठगा। उल्लेखनीय है कि मुख्य फसलों धान आदि के घोषित एम.एस.पी. दामों में बढ़ोत्तरी मात्र 3 प्रतिशत रखी गई, जो देश के वार्षिक थोक मूल्य सूचकांक से भी कम है, यानि किसानों को पिछले वर्ष के मुकाबले घोषित एम.एस.पी. दाम पर फसल बेचने से भारी आर्थिक नुक्सान होगा।

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर, पूर्व प्रधान वैज्ञानिक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली (मो. 94168-01607)

इसके अतिरिक्त गलत फार्मूले ए2+एफ.एल. पर घोषित करके केन्द्र सरकार केवल धान किसानों से ही लगभग 75 करोड़ किवंटल धान की सरकारी खरीद द्वारा लगभग साठ हजार करोड़ रूपये का शोषण करेगी, क्योंकि केन्द्रीय कृषि मूल्य एवं लागत आयोग की गणना के अनुसार व्यापक कुल लागत (सी2 लागत) पर धान के दाम 3135 रूपये प्रति किवंटल बनता है। इसलिए घोषित समर्थन मूल्य पर किसानों को 766 रूपये प्रति किवंटल का नुकसान होगा। इसी तरह घोषित समर्थन मूल्य पर किसानों का नुक्सान ज्वार में 1110 रूपये प्रति किवंटल, बाजरे में रूपये 539 प्रति किवंटल, मक्का में 528 रूपये प्रति किवंटल, अरहर में 2259 रूपये प्रति किवंटल, मूंग में 2446 रूपये प्रति किवंटल, उड़द में 2244 रूपये प्रति किवंटल, मूंगफली में 1807 रूपये प्रति किवंटल, सोयाबीन में 1629 रूपये प्रति किवंटल, सूरजमुखी मे 1826 रूपये प्रति किवंटल, तिल मे 3681 रूपये प्रति किवंटल, नाइजर में 2192 रूपये प्रति किवंटल और कपास मे 2366 रूपये प्रति किवंटल होगा।

केन्द्र सरकार द्वारा पिछले चार दशक से व्यापक कुल लागत सी-2 की बजाय गलत फार्मूले ए2+एफ.एल. पर एम.एस.पी. घोषित करने और एम.एस.पी. गारंटी कानून नहीं बनाने के कारण ही, भारतीय कृषि घाटे का सौदा बनती जा रही है और किसान कर्जबन्द बन कर, आत्महत्या को मजबूर हो रहे हैं।